कुरुक्षेत्र

संपादकीय

गांवों में विकास के साथ ह्रास क्यों ?

हो सकता है कि आलोचकों के इस कथन में सत्यता का कुछ अंश हो कि हमारे गांवों में विकास की गति बड़ी धीमी है और वे आज भी कूड़े के ढेर हैं, परन्तु जब हम गांवों में जाकर देखते हैं तो पता चलता है कि किसानों के खेत-खलिहान शस्य और अन्न सम्पदा से भरपूर हैं। खेत-खेत पर ट्यूबवैल लगे हुए हैं। बैलों के बजाय मशीनों से खेती होने लगी है। वहां झोपड़ियों का स्थान अट्टालिकाओं ने ले लिया है। देश के अधिकांश गांव सड़कों से जुड़ गए हैं। उन पर मोटर साइकलें, ट्रैक्टर आदि दौड़ते हुए देखे जा सकते हैं। जो ग्रामीण पहले फटे चिथड़ों को पहन कर जीवन बिताते थे अब उनके अंग-प्रत्यंग टेरेलीन और रेशमी वस्त्रों से ढके नजर आते हैं।

शिक्षा की दृष्टि से भी अब गांवों में पढ़े-लिखों की कमी नहीं है। अब वहां समाचार-पत्रों की भी पहुंच है। रेडियो और ट्रांजिस्टरों की गूंज घर-घर में सुनाई देती है। सिनेमा, नाच-गान स्वांग आदि में भी उनकी रुचि पैदा हो गई है। स्कूल और स्वास्थ्य केन्द्र खुल गए हैं। इसमें शक नहीं कि गांवों में नई रोशनी आई है। राजनीतिक दृष्टि से भी अब वे अधिक जागरूक हैं और भौतिक दृष्टि से समृद्धि की ओर अग्रसर हैं।

परन्तु खेद है कि जहां एक ओर वे विकास की ओर अग्रसर हैं वहां दूसरी ओर उनमें नैतिक ह्रास की गति भी बड़ी तेज है। हमारे सामाजिक जीवन के लिए पूर्वजों द्वारा जिन मूल्यों की स्थापना की गई थी उनसे अब हम भटकते जा रहे हैं। हमारे गांवों के शुद्ध पवित्र जीवन में अब कालुष्य का दानव घुस गया है। जहां पहले कोई शराब का नाम तक न जानता था वहां अब शराब की नालियां बह रही हैं। मां-बाप का मान-सम्मान नहीं रहा। आपसी मेल-मिलाप और प्रेमभाव की तो बात ही क्या, भाई-भाई का जानी दुश्मन है। जाति-बिरादरी के आपसी लड़ाई-झगड़ों से गांवों का वातावरण विषाक्त बन गया है। चोरी, लूट और डकैतियों का बोल-बाला है और असुरक्षा की भावना विद्यमान है। न अब वहां पहले जैसे स्वस्थ, सुन्दर और छरहरे जवान दिखाई देते हैं और न अब वहां पहले जैसा दूध-घी का खान-पान सुलभ है। सुलभ है तो चाय और धूम्रपान। कुछ लोग अनाप सनाप धन के मालिक बन बैठे हैं तो कहीं गरीबी, बीमारी और बेरोजगारी का बोलबाला है। किसी को दो जून रोटी भी मयस्सर नहीं। रोजी-रोटी की तलाश में बहुतसों का शहरों की ओर पलायन जारी है। कैसी विडम्बना है कि शिक्षा पर राष्ट्र का अन्धाधुन्ध पैसा खर्च हो रहा है पर नैतिक शिक्षा की ओर ध्यान नहीं। विकास योजनाएं चालू हैं पर दुःख-सन्ताप बढ़ता चला जा रहा है।

एक ओर विकास और दूसरी ओर ह्रास यह स्थिति क्यों? जब हम अपने गांवों की इस स्थिति के कारणों की खोज करते हैं तो पाते हैं कि जिन प्राचीन मूल्यों पर हमारे सुन्दर समाज का भवन खड़ा हुआ था उन मूल्यों का ह्रास ही हमारे पतनोन्मुख जीवन का कारण है। जीवन में भौतिकता को प्रधानता देने से धन लोलुपता बढ़ती है और फिर भ्रष्टाचार पनपता है। जब फिर किसी समाज में भ्रष्टाचार का घुन लग जाता है तो उस समाज का ढांचा चरमरा कर टूट जाता है। आज यही हालत हमारे समाज की भी है और अब जरूरत इस बात की है कि भौतिकता और नैतिकता में सामंजस्य पैदा किया जाए और अपने सामाजिक जीवन में नए पुराने स्वस्थता प्रदान करने वाले मूल्यों की स्थापना की जाए। इसके लिए हमें पीछे की ओर मुड़कर देखना होगा और पूर्वज हमारे लिए जो विरासत छोड़ गए हैं उससे हमें अपने को सम्प्रक्त करना होगा। □

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

●

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण पुनर्निर्माण मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

एक प्रति 1 रु० : वार्षिक चंदा 10 रु०

●

दूरभाष : 382406

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : राधे लाल

आवरण पृष्ठ : परमार

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण पुनर्निर्माण का प्रमुख मासिक

वर्ष 26 ज्येष्ठ–आषाढ़ 1903 अंक 8

इस अंक में : पृष्ठ संख्या

लेख / लेखक	पृष्ठ
समग्र ग्राम्य विकास : एक पर्यालोचन **बजरंग दत्त मिश्र**	2
ग्रामीण अंचल में जन-संचार की कमी क्यों ? **एन० पी० चौबे**	4
प्राथमिक शिक्षक ही भावी भारत के निर्माता **श्रीमती प्रेम भटनागर**	6
कंचे, चादर और पैर **डा० प्रेम शरण शर्मा**	8
प्रौढ़ शिक्षा अभियान को सफल बनाने के मूलमंत्र **लेखराम चौहान**	10
मनोहारी वातावरण के लिए भूदृश्य रचना आवश्यक **गेंदालाल शर्मा**	12
गाँधी जी और ग्रामोद्योग **सुरेन्द्र अग्रवाल**	14
विकलांगों का कल्याण : एक सामाजिक दायित्व **महेन्द्र प्रताप सिंह**	16
खेतिहर मजदूरों की बेरोजगारी दूर करने के नवीन प्रयास **जितेन्द्र नाथ मल्होत्रा**	17
सौर-ऊर्जा और मानव जीवन **शुकदेव प्रसाद**	19
नए बजट में कमजोर वर्गों को राहत **कृष्णकान्त**	22
मरु प्रदेश की संपदा : भेड़ और ऊन **राम प्रसाद जाट**	24
स्वयं-सेवा और समाज-सेवा की अनुपम योजना **कमला प्रसाद चौरसिया**	25
सांगानेर का हस्तशिल्पी कागज **दुर्गा शंकर त्रिवेदी**	26
कायाकल्प (कहानी) **अखिलेश्वर**	27

स्थायी स्तम्भ

कविता : साहित्य समीक्षा : केन्द्र के समाचार : पहला सुख निरोगी काया इत्यादि।

समग्र ग्राम्य विकास एक पर्यालोचन

बजरंग दत्त मिश्र

समग्र ग्राम्य विकास का कार्यक्रम इस आशय से चलाया जा रहा है कि लघु तथा सीमांत कृषकों, कृषक मजदूरों तथा अकृषक मजदूरों, जो कि सामान्य गरीबी की रेखा के नीचे रह रहे हैं, के आर्थिक स्तर में सुधार हो सके।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आने वाले इन विभिन्न वर्गों की पहचान के लिए जो आधार रखे गए हैं, वे बहुत उपयुक्त नहीं हैं जैसे सिंचित और असिंचित भूमि के आधार पर कृषि जोत की सीमा में अन्तर रखा गया है। इसका प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ है कि अधिक लाभ पाने की दृष्टि से लोग अपनी असिंचित जोतों को सिंचित में परिवर्तित करने के लिए तत्पर नहीं होते। इस दृष्टि से इस अन्तर को समाप्त कर दिया जाना चाहिए।

अभी तक एक विकास खंड में प्रतिवर्ष इस योजना के अन्तर्गत 600 परिवारों को चुना जाता है। यदि पांच वर्ष तक योजना चलती रहे तो एकमात्र 3000 परिवारों को लाभ होगा जबकि विकास खंड में कुल परिवारों की संख्या बीस से तीस हजार तक होती है। यदि इसमें से उच्च वर्ग को निकाल दें तो भी यह संख्या 15 से 25 हजार के बीच आएगी। इस प्रकार हमारा सारा कार्यक्रम एकमात्र 12 प्रतिशत से लेकर 20 प्रतिशत लोगों तक ही सीमित होगा।

यह भी एक कठिनाई है कि अभी तक 600 परिवारों का चयन एक सघन क्षेत्र में किया जाता है जिसका कुपरिणाम यह होता है कि उस क्षेत्र के लोगों को तो यह सुविधा मिलती है पर विकास खंड का शेष क्षेत्र इस सुविधा से वंचित रह जाता है। इतना ही नहीं खंड स्तर के उन सम्बन्धित दो-तीन ग्राम सेवकों पर कार्यभार अपेक्षाकृत अधिक हो जाता है जबकि शेष ग्राम सेवकों पर कम रहता है। इस दृष्टि से भी इस व्यवस्था में खामी है।

पात्र व्यक्तियों के चयन हेतु सर्वेक्षण में लगने वाले अधिक समय की अपेक्षा बहुत ही कम समय दिया जाता है। परिणामस्वरूप चयन कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न नहीं होता। कुछ स्थानों पर चयनित व्यक्तियों की सूची ही यथा समय नहीं बनाई जाती पर ऋण एवं अनुदान उपलब्ध कराने की प्रक्रिया तहसील तथा ग्राम सेवक की रिपोर्ट पर हर मामले में अलग-अलग चलाई जाती है।

लघु एवं सीमांत कृषकों के लिए जो विभिन्न कार्यक्रम सुझाए गए हैं उनमें केवल अनुदान के प्रतिशत में अन्तर रखा गया है। इस बात का ठीक-ठीक निर्णय नहीं किया गया कि किस जोत वाले कृषक को किस प्रकार कार्यक्रम लेने होंगे। उदाहरणार्थ जिनकी जोत आधे हेक्टेयर से कम है उनके लिए बखारी तथा कृषि यंत्रों पर अनुदान देना निरर्थक है। उनके लिए व्यवस्था होनी चाहिए थी कि उनको उद्यान सम्बन्धी कार्यों पर ही अनुदान मिलता। इसका लाभ यह होता कि उनके नाम से दूसरे लोग जिन सुविधाओं का अनुचित रूप से उपभोग कर रहे हैं उनको ऐसा अवसर न मिलता। इसी प्रकार यह भी वर्गीकरण अपेक्षित है कि आधा हेक्टेयर से एक हेक्टेयर तक के लोगों के लिए कौन-कौन सी सुविधाएं उपलब्ध होंगी। तथा एक हेक्टेयर से लेकर दो हेक्टेयर तक के लोगों को कौन-कौन सी सुविधाएं उपलब्ध होंगी। एक हेक्टेयर और उससे ऊपर के लोगों को ही सिंचाई तथा बड़े कृषि यंत्रों पर छूट देने की व्यवस्था होनी चाहिए। आधा एकड़ से एक एकड़ तक के लोगों के लिए छोटे कृषि यंत्रों की छूट ही सुलभ होनी चाहिए। ऐसे लोगों को अन्य उन्नत कृषि संसाधनों की सुविधा तभी मिलनी चाहिए जबकि वे कृषि सहकारी समिति बना लें।

वर्तमान प्रणाली के आधार पर एक मात्र पात्र व्यक्तियों की सूची बनाने के स्थान पर समग्र विकास खंड के लोगों को विभिन्न वर्गों से वर्गीकृत कर दिया जाए तथा अनुदान एवं ऋण की सहायता के सम्बन्ध में नीचे से ऊपर की ओर चला जाए। नीचे के लोगों को अधिक प्रतिशत में अनुदान उपलब्ध कराया जाए जो कि ऊपर के वर्गों के मामले में क्रमशः घटता जाए। इस बात का भी प्रतिबंध हो कि अनुदान तथा ऋण की सुविधा नीचे के वर्ग के लोगों को दिए जाने के बाद ही ऊपर की ओर चला जाएगा। चार हेक्टेयर से ऊपर के लोगों को कोई आर्थिक सहायता न देकर एक मात्र तकनीकी जानकारी एवं नकद मूल्य पर समयानुसार संसाधन उपलब्ध कराकर सहायता पहुंचाई जा सकती है।

छूट के प्रतिशत में भी अन्तर होना चाहिए। आधा हेक्टेयर तक के लोगों को 50 प्रतिशत की छूट दी जाए। एक हेक्टेयर तक के लोगों को $33\frac{1}{3}$ प्रतिशत की और एक हेक्टेयर से ऊपर के लोगों को 25 प्रतिशत की छूट दी जाए। अधिक लोगों को उन्नत कृषि कार्यक्रमों में लगाने के लिए आवश्यक है कि दो हेक्टेयर से ऊपर चार हेक्टेयर तक के लोगों को भी विभिन्न कृषि कार्यक्रमों के लिए 10 प्रतिशत का अनुदान दिया जाए।

कृषक मजदूरों तथा अकृषक मजदूरों को समग्र ग्राम्य विकास योजना में दी

आने वाली सहायता के सम्बन्ध में विशेष रूप से विचार करने की आवश्यकता है। अभी तक सहायता का जो स्वरूप है उससे इस वर्ग के लोगों को अधिक लाभ नहीं मिल पा रहा है। इनको अपेक्षित लाभ पहुंचाने के लिए आवश्यक है कि कुछ उद्योग-धंधों का नाम गिना कर कार्यक्रम की इतिश्री न मान ली जाए अपितु प्रदेश स्तर पर सोच-विचार करके यह देख लिया जाए कि प्रदेश के किस भाग में किस प्रकार के उद्योग-धंधे चल सकते हैं ? इस प्रकार का विचार करने में वर्तमान समय में चलने वाले गांधी आश्रमों, बीड़ी उद्योगों तथा अन्य कुटीर उद्योगों की प्रक्रिया का परीक्षण कर उससे प्राप्त ज्ञान से लाभ उठाया जा सकता है। कहने का अभिप्राय यह है कि आज ग्रामीणों को उद्योग स्थापित करने के जो संसाधन सुलभ कराए जाते हैं वे निम्नलिखित तीन कारणों से अपेक्षित रूप में नहीं चल पाते।

1. अपेक्षित प्रशिक्षण का अभाव।
2. उचित दाम पर कच्चे माल की व्यवस्था का न होना।
3. तैयार माल की खपत की समुचित व्यवस्था का न होना।

इसके लिए यह आवश्यक है कि शासन सोच-विचार कर इस प्रकार का निर्णय ले कि कुछ उद्योग विशेष ग्राम के उद्यमियों द्वारा ही चलाए जाएंगे। इस कार्य के सुचारु संचालन हेतु शासन की वर्तमान नीति से कुछ हटकर उस प्रकार काम करना पड़ेगा जिस प्रकार अन्य उद्योगों के लोग कर रहे हैं। उदाहरणार्थ गांव-गांव में उद्योग विशेष को अपनाने वाले लोगों को कच्चा माल उनके घर पर पहुंचाने तथा पक्का माल उनके घर से उठाने की व्यवस्था करनी होगी। तैयार माल लेते समय ही पूर्व निश्चित दर पर पारिश्रमिक भुगतान की व्यवस्था करनी होगी। हो सकता है कि उसके लिए वर्तमान खादी ग्रामोद्योग कार्यक्रमों में रत रचनात्मक संस्थानों के आधार पर वर्तमान जिला उद्योग केन्द्रों को परिवर्तित करना पड़े या उनमें इस प्रकार के अनुभाग की अलग से स्थापना करनी पड़े जिसके उपकेन्द्र विकास खंडों में भी स्थापित किए जाएं।

इस सम्बन्ध में यह भी आवश्यक होगा कि उद्योग विभाग भी ग्राम्य विकास से सम्बन्धित अन्य विभागों की ही भांति विभिन्न स्तरों पर विशेषकर जिला एवं खंड स्तर पर विकास के समन्वयात्मक ढांचे के अन्तर्गत लाया जाए।

इस प्रकार के उद्योगों में उद्यमियों को किसी प्रकार की छूट देने की आवश्यकता नहीं होगी। छूट का उपयोग एकमात्र अपेक्षानुसार ग्रामीण उद्यमियों द्वारा तैयार किए गए माल का विक्रय मूल्य कम करने तथा अपेक्षित साज-सज्जा देने में ही करना पड़ेगा। इस व्यवस्था का सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि अनुदान के वितरण और उसके उपयोग में जो यत्र-तत्र शिकायतें मिलती हैं उनके अवसर समाप्त हो जाएंगे।

इस सम्बन्ध में यह भी निश्चय करना पड़ेगा कि किस जनपद और उसके किस विकास खंड में मुख्य रूप से किन-किन उद्योगों को लिया जाए। अभी तक जो अनेक उद्योगों के नाम कार्यक्रम में गिना दिए गए हैं उससे काम नहीं चलेगा। सुविचारित रूप में हर स्तर पर मिल-बैठकर स्थान विशेष की परिस्थितियों, उपलब्ध कच्चे माल, लोगों की आवश्यकताओं और स्थानीय खपत के अतिरिक्त बचने वाले माल की खपत आदि सभी बातों पर विचार कर यह निर्धारित करना पड़ेगा कि कौन सा उद्योग, कहां, किस आकार-प्रकार का चलाया जाए।

समग्र ग्राम्य विकास के अन्तर्गत लिए जाने वाले विभिन्न कार्यक्रम अर्थ-व्यवस्था के सम्बन्ध में सहकारी और अन्य व्यावसायिक बैंकों द्वारा धन उपलब्ध करने पर निर्भर करते हैं। इन बैंकों से अपेक्षित रूप में ऋण राशि यथा समय उपलब्ध नहीं होती, परिणामस्वरूप लाभार्थी का मनोबल टूटता है और उसमें विकास कार्यकर्ताओं, बैंक के अधिकारियों तथा स्वतः शासन के प्रति अविश्वास की भावना उत्पन्न होती है। इस स्थिति का मूल कारण यह है कि प्रदेश स्तर तथा जिला स्तरों पर यह बात गंभीरतापूर्वक नहीं सोची गई कि अनुदान की प्राविधानित धनराशि के लिए कितने परिणाम में ऋण की आवश्यकता होगी और वह ऋण किन-किन बैंकों से किस प्रकार उपलब्ध होगा ? यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि बैंक के लोगों को हम समग्र ग्राम्य विकास के विभिन्न कार्यक्रमों की अपेक्षाओं के अनुरूप ऋण देने के लिए तैयार नहीं कर पाए।

राष्ट्रहित की दृष्टि से ग्राम्य विकास में सभी लोगों को अपनी भूमिका तत्परता से निभानी है। यदि इसको ध्यान में रखकर नीति विषयक इस आशय का निर्णय यथासमय लिया गया होता कि बैंक के लोग भी समग्र ग्राम्य विकास की योजनाओं के अनुसार ही ऋण वितरण करेंगे तथा उनका लक्ष्य एक मात्र ऋण वितरण का ही न होकर लाभार्थियों की संख्या का भी होगा तो संभवतः कार्यक्रम अधिक अच्छा चला होता।

समग्र ग्राम्य विकास का कार्य मख्यतया विकास खंडों के माध्यम से ही संपादित हो रहा है। विकास खंड 1952 में जब प्रारम्भ किए गए थे तो कर्मचारियों की जो संख्या उस समय थी लगभग वही संख्या आज भी है जबकि कार्य-भार कई गुना बढ़ गया है। अस्तु यह आवश्यक होगा कि खंड स्तर पर फील्ड और कार्यालय दोनों में कर्मचारियों की संख्या में अपेक्षित वृद्धि की जाए। इसी प्रकार जिला मण्डल तथा प्रदेश स्तर पर कार्यक्रमों को दृष्टि में रखते हुए कार्यकर्त्ताओं एवं अधिकारियों की संख्या में वृद्धि अपेक्षित है। इन वृद्धियों के बाद भी शासन को आर्थिक लाभ होगा यदि ग्राम्य विकास के नाम पर चलने वाले प्रयत्नों की द्विविधा जो कि विभागों एवं अधिकारियों और उनके कार्यालयों के रूप में है, को समाप्त कर दिया जाए। इससे सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि आज की समन्वय सम्बन्धी अनेक समस्याएं स्वतः समाप्त हो जाएंगी। □

बजरंग दत्त मिश्र
आचार्य,
प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र,
फैजाबाद (उत्तर प्रदेश)

ग्रामीण अंचल में जन संचार की कमी क्यों ? ※ एन० पी० चौबे

देश की प्रगति का रथ आगे बढ़ाने के लिए शासन के साथ ही विभिन्न अशासकीय संस्थान संगठन विभिन्न समाज और हर वर्ग तथा मजहब के लोग लगे हुए हैं । सभी का कुछ न कुछ योग है । परन्तु रथ के पहिए तेज क्यों नहीं चल रहे हैं? कौन सी बाधाएं इसकी गति को अवरुद्ध किए हुए हैं ? कारण है ग्रामीण अंचल प्रगति की गति से कदम नहीं मिला पा रहा है । ऐसा क्यों है ? अनेक कारण हैं इसके । इनमें एक कारण यह भी है कि ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंचार की कमी है । अपेक्षित चेतना का अभाव है । प्रगति का आह्वान उनके दिलो-दिमाग में नहीं उतर पा रहा है ।

हमें जनसंचार की इसी कमी पर दृष्टिपात करना है । हम इस मोर्चे पर क्यों पिछड़ रहे हैं इस बात पर गंभीरता से एवं विभिन्न कोणों से विचार करने की आवश्यकता है । सबसे पहले जरूरत इस बात को देखने की है कि शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच जनसंचार के असंतुलन को दूर कैसे किया जाए ? जिस देश में अधिकांश जनता ग्रामों में रहती हो वहां उसी अनुपात से जनसंचार की सुविधाएं क्यों नहीं जुट पा रही हैं ?

आज समाचार-पत्रों में ग्रामीण क्षेत्रों के कितने समाचार छपते हैं? रेडियो पर प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों में शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के कार्यक्रमों का क्या प्रतिशत है ? सिनेमा कितने ग्रामीण देख पाते हैं ? क्या बड़ी प्रदर्शनियां ग्रामों तक पहुंच पाती हैं ? यही कुछ बातें हैं कि जिससे देश का समूचा ग्रामीण इलाका प्रगति के संदेश को आत्म सात करने में असमर्थ रहा है । वह सरकार के प्रयत्नों के साथ कदम नहीं मिला पाता । सरकार की सूचनाओं विचारों एवं संदेशों से वह पूर्णतः अभिज्ञ नहीं हो पाता ।

यह सर्व स्वीकार्य बात है कि आज देश में जनसंचार सुविधाओं का भारी अभाव है । विकास गतिविधियों का आवश्यक अंग होने के बावजूद इसे अपेक्षित महत्व नहीं मिल रहा है । राज्य के पंचायत, सूचना तथा प्रकाशन आदिवासी कल्याण, विकास खण्ड, कृषि, सहकारिता आदि विभागों के एक्सटेंशन वर्क्स तथा भारत सरकार के रेडियो प्रसारणों के साथ ही क्षेत्रीय प्रचार निदेशालय चल-चित्रों मौखिक संदेशों, व्यक्तिगत संपर्क, पोस्टरों, मुनादि आदि के माध्यम से ग्रामों तक शासन का संदेश पहुंचाने का कार्य कर रहे हैं । क्षेत्रीय प्रचार निदेशालय "फीड बेक" अथवा जनता की प्रतिक्रियाएं वापस शासन तक पहुंचाने का कार्य भी करता है । पर इन सब के प्रयत्न, दाल में नमक जैसे हैं । देश की विशालता एवं ग्रामीण क्षेत्रों के विस्तार को देखते हुए जनसंचार की इन एजेन्सियों के कार्य क्षेत्र को अधिक विस्तृत कर उन्हें साधनों से अधिक सुसज्जित तथा सशक्त बनाए जाने की आवश्यकता है । विकास कार्यक्रमों सम्बन्धी सूचनाओं एवं संदेशों को उन ग्रामीणों तक जिनके लिए वे तैयार किए गए हैं ग्राम की साख समितियों तथा बैंकों की ग्रामीण शाखाओं के माध्यम से भी पहुंचाया जाना चाहिए । शिक्षक जो ग्रामीणों के लिए जनसंचार का एक विश्वसनीय माध्यम है का भी पूरा उपयोग किया जाना चाहिए ।

विकास एजेन्सियों और कृषि-विश्वविद्यालयों द्वारा ग्रामीणों के लिए संदेश रेडियो के अलग चैनलों द्वारा प्रसारित किए जाने चाहिए । ग्रामीण रोजगार के अवसर जो कृषि, मत्स्य पालन, पशु पालन, कोसा या रेशम, फल उत्पादन उद्यानिकी तथा वानिकी के क्षेत्र में ही अधिक खोजे जा सकते हैं, सूचना भी जनसंचार के विभिन्न माध्यमों से ग्रामों तक पहुंचनी चाहिए । अधिक मजदूरी के सुअवसरों वाले स्थानों की सूचना उन स्थानों के मजदूरों तक पहुंचनी चाहिए जहां मजदूरी का अभाव है ।

इसके अलावा परम्परागत ग्रामीण जनसंचार के माध्यम जैसे रामलीला, लोकनृत्य, लोकगीत, कठपुतली के खेल, हरि कथा, भजन आदि को भी भुलाया जाना उचित नहीं होगा ।

देश की जनसंख्या को देखते हुए हमारी "एक्सटेंशन सर्विस" में विस्तार की भी बहुत गुंजाइश है । एक रिपोर्ट के अनुसार जापान में एक एक्सटेंशन वर्कर को जहां 728 लोगों से सम्पर्क करना पड़ता है, ग्रीस में 403 लोगों से, इंजराइल में 157 लोगों से, वहां हमारे देश में एक एक्सटेंशन वर्कर को 2,676 लोगों से संपर्क करना होता है । एक्सटेंशन वर्कर के इस दायित्व को हल्का किया जाना ठीक होगा ।

इसी प्रकार जनसंचार साधनों की उपलब्धि सम्बन्धी आंकड़े भी चौंकाने वाले हैं । यूनेस्को द्वारा निर्धारित आंकड़ों के अनुसार प्रति 100 व्यक्तियों के पीछे दैनिक समाचार पत्रों की 10 प्रतियां ग्रामीण क्षेत्रों में पहुंचनी चाहिए वहां हमारे देश में 1.6 ही पहुंचती हैं । पांच के स्थान पर 2.7 रेडियो सेट हैं, दो के स्थान पर 0.56 सिनेमा सीट हैं और .008 टी० वी० सेट उपलब्ध हैं ।

आज जो प्रचार सामग्री और संदेश ग्रामीणों तक पहुंचाएं भी जाते हैं उनमें शहरीपन अधिक होता है । यह सामग्री उनके लिए रुचिकर एवं विश्वसनीयता लिए नहीं होती । ग्रामीण समस्याओं के सम्बन्ध में रेडियों, समाचार पत्रों आदि में जो चर्चा या उल्लेख होता है वह सतही एवं बाहरी होता है । वह पूर्णतः व्यावहारिक गहराई लिए एवं वास्तविकता पर आधारित नहीं होता ।

फसलों के विपुल उत्पादन के बावजूद साधारण कृषकों और ग्रामीण क्षेत्रों में खास विशेष परिवर्तन क्यों नहीं आया ? इसका भी एक कारण है । कृषि-विज्ञान और कृषि-तकनीक का लाभ केवल कुछ बड़े किसानों तक ही पहुंच रहा है । इसकी पहुंच छोटे किसानों तक नहीं हो पा रही है । शासकीय कार्यवाहियों की पेचीदगियों के कारण देहात का वास्तविक जरूरतमन्द व्यक्ति चाहे वह भूमिहीन मजदूर हो, कारीगर हो, छोटा किसान हो ऋण आदि की राशि प्राप्त करने तथा सुलभ की जाने वाली प्रोत्साहन सुविधाओं से वंचित रह जाता है जबकि बड़े किसान सम्प्रेषण का लाभ लेकर रेडियो-फिल्मों तथा विस्तार कर्म के माध्यम से जानकारी प्राप्त कर इन सुविधाओं को हासिल कर लेता है । होना यह चाहिए कि विस्तार कर्मचारियों को इन पेचीदगियों को हल कर विकास के संदेश को इन गरीबों तक पहुंचाना चाहिए।

इस बात की भी आवश्यकता अनुभव की जा रही है कि ग्रामीणों के लिए तैयार की जाने वाली सूचनाएं संदेश या अन्य प्रचार सामग्री बड़े सोच-समझकर सावधानीपूर्वक तैयार की जाए ताकि वह रुचिकर, सरल तथा ग्रामीणों के लिए ग्राह्य हो सके । अलग सम्प्रदाय और समाज के लिए अलग तकनीक का उपयोग किया जाए ।

जब विकास के क्षेत्र में नए-नए दृष्टिकोणों को अपनाया जा रहा है तो ग्रामीण इलाके हेतु जनसंचार की विधियों में भी परिवर्तन लाया जाना चाहिए ।

राज्य के सूचना विभागों में क्षेत्रीय प्रचार इकाइयों, रेडियो के रेडियो रूरल फोरम तथा विकास खंड मुख्यालयों में सूचना केन्द्रों की पुनः स्थापना की जानी चाहिए । ग्रामों में प्रौढ़ शिक्षा को एक निरंतर चलने वाले कार्यक्रम के रूप में स्वीकार किया जाना उचित होगा ।

ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंचार के विरुद्ध कार्य कर रही अवरोधक शक्तियों का सामना करना भी आवश्यक है । यह कार्य धैर्यपूर्वक उनका विश्वास अर्जित कर किया जा सकता है । किसी भी संदेश को लगातार ग्रामीणों की ड्योढ़ी तक न पहुंचा कर उसे कुछ अन्तराल से उन तक पहुंचाया जाना ठीक होगा ताकि अन्तराल की अवधि में वे उनके लाभों पर ठंडे मन से विचार कर सकें और संदेश के प्रति विरोध या उसके प्रति उनके मन में अविश्वसनीयता न उपजे ।

अधिक विस्तार में न जाकर यदि संक्षेप में कहा जाए तो यह इंगित करना उचित होगा कि ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंचार का फैलाव तथा गठन इस देश की विशालता, बृहद् जनसंख्या और पिछड़ेपन को देखते हुए बड़े पैमाने पर किया जाना चाहिए तभी विकास की गति तेज हो सकेगी । प्रगति रथ के उगमगाते पहिए आगे बढ़ेंगे । उन्नति के लिए लोगों में कठोर श्रम एवं आत्म-विश्वास की भावना जागेगी तथा शासन द्वारा निरन्तर किए जा रहे विकास सम्बन्धी प्रयत्नों के उसे अपेक्षित परिणाम मिलना प्रारम्भ हो सकेंगे । □

क्षेत्रीय प्रचार अधिकारी,
भारत सरकार,
गुना (म० प्र०) ।

कसम खाएं ※ चन्द्रकुमार असाटी

हम सब
एक ही धरती पर जन्मे इंसान हैं
यह बात और है
इनमें कोई हिन्दू या मुसलमान है
विभिन्न धर्मों के पैगम्बरों ने
धार्मिक उपदेशों, वाणियों में
मानव की पहचान को
मानवता में सीमित कराया है।
पावन वसुन्धरा पर ईश्वर प्रदत्त
वायु, जल, प्रकाश और अनाज
सभी इंसान समान भाव से
करके उपयोग जीवित हैं ।
भविष्य में भी जीवित रहेंगे
यह सदियों से ध्रुव सत्य है ।
बचपन से सुना है
माता-पिता, गुरुओं से
पढ़ा है पोथी-पोथियों में
सुना सच नहीं होता
आंख झूठ नहीं बोलती
फिर न जाने क्यों समझदार लोग
धर्म की ओट में,
फैलाई गई अफवाहों से दिग्भ्रमित हो
अपने ऐसे पड़ोसी के,
जिनसे उनके बरसों से
सगे भाई-बहनों सरीखे
गहरे पवित्र सम्बन्ध हैं,
धर्म के नाम पर
परस्पर खून के प्यासे हो जाते हैं ।
शर्म से चुल्लू भर पानी में
डूब मरने की बात है ।
अफवाह सदा बेबुनियाद होती है
अथवा सच को काफी जोड़-तोड़,
वास्तविक तथ्य को
निज स्वार्थवश तोड़-मरोड़कर
आतंक, असुरक्षा और अविश्वास को
जन्म देकर सुखों में बारूद भरती है ।
मेरे दोस्तो,
सांप्रदायिकता के विशाल विकराल अजगर ने,
अपना मुंह खोला है,
मानवता कराही है ।
धर्म गर्व से जीना सिखाते हैं
जबकि धार्मिक अंध-विश्वासों से लिपटी
साम्प्रदायिकता,
समूची मानवता के लिए अभिशाप है ।
आओ धर्म और ईमान की साक्षी में,
पहले भारतीय होने की कसम खाएं ।

प्राथमिक शिक्षक ही भावी भारत के निर्माता

✱ श्रीमती प्रेम भटनागर

"बच्चे ही भावी नेता हैं। शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि वे उनके चरित्र निर्माण के लिए अपनी शिक्षा के माध्यम से अपने प्रभाव का प्रयोग करें। शिक्षक बच्चों में एकता, देश भक्ति, अनुशासन और साहस की भावना पैदा कर सकते हैं।" 7 अप्रैल, 1981 को नयी दिल्ली के तालकटोरा इन्डोर स्टेडियम में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की ओजस्वी वाणी गूंज रही थी। देश के विभिन्न भागों से आए 5,000 प्राथमिक शिक्षकों के सम्मुख वे भाषण दे रही थीं। ये लोग अखिल भारतीय प्राथमिक शिक्षक महासंघ द्वारा आयोजित राष्ट्रीय एकता विचार गोष्ठी में भाग लेने आए थे।

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी शिक्षकों को सम्बोधित करती हुई

प्रधानमंत्री के अलावा शिक्षा मंत्री श्री एस० बी० चव्हाण, रेल मंत्री श्री केदार पांडेय और संसद सदस्य श्री डी० पी० यादव ने शिक्षकों को सम्बोधित किया।

सब ही ने प्राथमिक शिक्षकों का महत्व बताते हुए उन्हें "देश का भावी निर्माता" "राष्ट्र की नींव का पत्थर" आदि सम्बोधित किया और उनसे यह कहा कि वे बच्चों में एकता और अनुशासन की भावना भरें।

मैं भी सम्मेलन में एक प्रतिनिधि की तरह गयी। जहां नेताओं के ये शब्द वहां बैठे हजारों प्राथमिक शिक्षकों में गर्व और उत्साह की भावना भर रहे थे। वहां मैं महसूस कर रही थी कि मेरे इर्द-गिर्द शिक्षक भाई बहनों में कुछ उद्वेग था। मुझे यह शब्द भी सुनने को मिल रहे थे। "यह सब कहने की बातें हैं वर्ना प्राइमरी टीचर को कौन पूछता है, समाज में हमारी इज्जत ही कहां है, आज पूछ है कालेज और यूनीवर्सिटी के प्रोफेसरों की हमें कौन पूछता है।"

तभी एक साथी ने कहा—"नहीं, अब वह बात नहीं है। मैं उत्तर प्रदेश के दूर के गांव से आया हूं, मैं सोच भी नहीं सकता था कि मुझे दिल्ली में इस प्रकार सम्मेलन में भाग लेने और प्रधानमंत्री के आमने सामने सुनने का अवसर मिल सकता है, आज हमारे नेता यह समझ गये हैं कि प्राथमिक शिक्षकों का कम महत्व नहीं है।"

भावी समाज के निर्माता

सम्मेलन में पहले मुझे महसूस हुआ कि हमारे राष्ट्र की नींव चरमरा रही है। जरूरत है इसे मजबूत करने की। समाज का वह महत्वपूर्ण वर्ग जो भावी समाज का निर्माण करता है और अब तक अपेक्षित रहा, अब उसका महत्व भी समझा जाने लगा है। प्राथमिक शिक्षकों में भी चेतना जाग रही है। वे अपना दायित्व समझते हैं और उसे पूरा कर रहे हैं। साथ ही वे यह आशा भी करते हैं कि समाज में उन्हें महत्वपूर्ण स्थान मिले जो गुरु वशिष्ठ और गुरु संदीपन को मिला हुआ था।

प्रधानमंत्री ने अध्यापक वर्ग को यह याद दिलाया कि राष्ट्र निर्माण में उनकी भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसमें दो राय नहीं हो सकती कि राष्ट्र का भविष्य योग्य, ईमानदार और सजग अध्यापकों पर निर्भर करता है।

प्राथमिक कक्षाओं के अध्यापकों की तो और भी बड़ी जिम्मेदारी होती है। मां की गोद से निकल कर बच्चा पहली बार अपने अध्यापक या अध्यापिका के सम्पर्क में आता है। बच्चे की पहली गुरु मां होती है और दूसरा गुरु अध्यापक होता है। बच्चे को गुरु पर गहरी निष्ठा होती है इसीलिए जब अध्यापक उसे बताता है यह "क" है तो वह सहज भाव से उसे मान लेता है। बच्चों के लिए अध्यापक द्वारा बतायी गयी बात पत्थर की लकीर होती है।

इसलिए प्राथमिक कक्षा के अध्यापकों की जिम्मेदारी और भी बढ़ जाती है। बच्चे एक स्लेट की तरह होते हैं। अध्यापक उस पर जो अंकित कर देते हैं वह पत्थर की लकीर बन जाता है। वे एक कोमल बेल की तरह होते हैं जिसे डोरा बांध कर चाहे जिधर मोड़ा जा सकता है। अच्छी खाद दी जाय, पानी दिया जाय, पर्याप्त रोशनी मिले तो बेल अच्छी फलेगी फिर माली उसे नराशता भी है। यह काम प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षक करते हैं। ये लोग जहां बच्चे को अक्षर ज्ञान करा कर पहला प्रकाश दिखाते हैं वहां उनके अन्दर उत्तम आचार-विचार, अनुशासन, स्वास्थ्य, नैतिकता, राष्ट्रीय एकता आदि की भावना भर कर उनका भावी जीवन गढ़ते हैं। वे जो भावना बच्चों के हृदय में भरते हैं वे उनके हृदय-पटल पर अंकित हो जाती है और जीवन पर्यन्त उनके साथ रहती है।

प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षक को बच्चों के साथ कहीं ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है। बच्चा अपने घर को छोड़कर पहली बार एक नये वातावरण में आता है। होश आने के बाद वह मां को ही देखता है। उसी से सब कुछ सीखता है। मां से उसे लगाव हो जाता है पर उस वातावरण से उसे निकाल कर स्कूल भेजा जाता है। उसके अध्यापक या अध्यापिका को उसका विश्वास जीतने के लिए आत्मीय और सौहार्दपूर्ण व्यवहार करना पड़ता है।

मां के सामने तो एक या दो बच्चे होते हैं, पर शिक्षक के सामने तो 30-40 या कहीं-कहीं 50 तक बच्चे होते हैं। उसे इन सबका ध्यान रखना पड़ता है। यदि शिक्षक बच्चों का विश्वास जीत लेता है तो वह उनका विकास भी भली प्रकार कर सकता है। इसके लिए जरूरी है कि शिक्षक का स्वभाव मृदु, कोमल और सहनशील हो। इसके लिए सिर्फ बी०ए०, एम० ए० जैसी डिग्रियों की आवश्यकता नहीं होती। मैंने देखा कि जरूरत पड़ने पर एक प्राथमिक विद्यालय का शिक्षक उच्च कक्षा के बच्चों को पढ़ा सकता है, पर ऊंची शिक्षा और बड़ी कक्षाओं के अनुभव प्राप्त शिक्षक प्राथमिक कक्षा के बच्चों को सफलतापूर्वक नहीं पढ़ा सकते।

शिक्षकों को सम्मानपूर्ण स्थान मिले

प्राथमिक कक्षा के अध्यापकों के लिए एक विशेष प्रकार का प्रशिक्षण, योग्यता, स्वभाव, सेवा-भावना की जरूरत होती है। इसके लिए सबसे पहली चीज तो यह है कि प्राथमिक कक्षाओं के अध्यापकों के महत्व को समझा जाए। उन्हें समाज में सम्मान पूर्ण स्थान मिले। आज हमारे यहां एक कालेज और विश्वविद्यालय के प्राध्यापक का कहीं ज्यादा सम्मान है और एक प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक को बहुत उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है। इसका एक कारण दोनों के वेतन-मानों में जमीन-आसमान का अन्तर है। आज अधिकतम वेतन विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों को मिलता है जबकि होना यह चाहिए कि प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों को अधिकतम वेतन मिलना चाहिए, क्योंकि वे शिक्षा के भवन की आधार शिला रखते हैं, उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त करके प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण के लिए जाएं और इसमें गौरव समझें। प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों को हीन दृष्टि से न देखा जाए। उन्हें अच्छा वेतन दिया जाए ताकि उनके दिमाग में कोई चिन्ता या परेशानी न रहे और वह उन्मुक्त रूप से पूरी सेवा भावना से नन्हें बच्चों के भविष्य का निर्माण कर सकें।

देश के विभिन्न राज्यों में प्राथमिक शिक्षकों के अलग-अलग वेतनमान हैं। सरकारी और मान्यता प्राप्त विद्यालयों में शिक्षकों को वेतनमान के अनुसार वेतन मिलता है, पर सुदूर गांवों में स्कूलों में शिक्षकों को समय पर वेतन नहीं मिल पाता। वह तो भला हो गांव वालों का जो उनकी सुख-सुविधा का ध्यान रखते हैं। कई बार प्राथमिक शिक्षकों की नियुक्ति उनके घर से दूर गांवों में की जाती है। उन्हें गांव में ही रहना पड़ता है। गांव वालों को उन्हें पारिवारिक सदस्य की तरह अपनाना चाहिए।

हमें यह समझना चाहिए कि प्राथमिक शिक्षक राष्ट्र निर्माण में एक महत्वपूर्ण योगदान कर रहे हैं। सेवा कार्य में लगे इन साधकों की सुविधा की ओर ध्यान देना सरकार और समाज का कर्त्तव्य है ताकि वे हर तरह की चिंता से मुक्त हो कर शिक्षण कार्य कर सकें।

यह प्रसन्नता की बात है कि आज राष्ट्र नेताओं और समाज का ध्यान समाज के इस महत्वपूर्ण वर्ग की ओर गया है। प्राथमिक शिक्षकों में चेतना आ रही है। इस दिशा में अखिल भारतीय प्राथमिक शिक्षक संघ महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। इस संघ की स्थापना 7 जनवरी, 1954 को नागपुर में हुई जहां तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने इसका शुभारम्भ किया। अलग-अलग प्रदेशों में प्राथमिक शिक्षक संघ शिक्षकों की स्थिति सुधारने के लिए कार्य कर रहे हैं। इसके प्रयासों के परिणामस्वरूप प्राथमिक शिक्षकों के लिए वेतन मान निर्धारित किया। उन्हें पर्याप्त संरक्षण दिया गया। पर अभी इन वेतन मानों में एकरूपता नहीं है। संघ की एक मांग यह भी है कि पूरे देश में शिक्षकों के वेतन मान और सेवा शर्तों में एक रूपता हो, उन्हें पेंशन उपादान (ग्रेच्यूटी) और भविष्य निधि की सुविधा दी जाए। प्राथमिक शिक्षा अनुदान आयोग की स्थापना की जाए। यह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अनुरूप हो।

शिक्षा मंत्री श्री एस०वी० चव्हाण ने सम्मेलन में यह विश्वास दिलाया कि सरकार शिक्षकों की समस्याओं से भली भांति परिचित है। इन समस्याओं के हल के लिए कदम उठाए जा रहे हैं, ताकि शिक्षकों की आर्थिक स्थिति में सुधार आए।

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा कि प्राथमिक शिक्षकों की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं ताकि अध्यापकों को समाज में आदर और सम्मान मिल सके। पर सरकार की भी अपनी सीमाएं है जिनके कारण अध्यापकों के वेतन मान सुधारने में कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है फिर भी हमारा ध्यान इस ओर बना हुआ है।

प्रधानमंत्री का इतना कहना ही शिक्षकों के लिए काफी है। प्रधानमंत्री ने जो शिक्षकों के बच्चों में राष्ट्रीय एकता, अनुशासन और देश प्रेम की भावना भरने का आह्वान किया और प्राथमिक शिक्षकों को जो सम्मान दिया उससे उनका उत्साह बढ़ा। सम्मेलन में आए हर प्रतिनिधि प्राथमिक शिक्षक के मन में यह भावना थी कि प्रधानमंत्री ने हमारे अन्दर विश्वास व्यक्त किया और कहा "मैं देश के भविष्य को प्राथमिक शिक्षकों के हाथ सौंपती हूं" उनके इस विश्वास की हमें रक्षा करनी है। उनका संरक्षण हमें मिलता रहे, समाज में सम्मानपूर्ण स्थान मिले तो हमें पैसे की भी चिन्ता नहीं हम प्रधानमंत्री की आशाओं को पूरा करेंगे। देश के नौनिहालों में देश-प्रेम की भावना भर देंगे। इन बच्चों को गढ़ कर हम सुदृढ़ राष्ट्र का निर्माण करेंगे। मुझे लगा कि राष्ट्र की चरमराती नींव को कुछ सहारा मिला। □

कंचे, चादर और पैर

डा० प्रेम शरण शर्मा

दो हम उम्र बच्चे आपस में हिसाब का खेल खेल रहे थे। बता, दस पैसे के 15 कंचे, तो बीस पैसे के ?

"तीस" दूसरे ने जवाब दिया।

"और तीस पैसे के ?"

"पैंतालीस।"

"चालीस पैसे के ?"

"साठ ।"

"और एक रुपये के ?"

"एक सौ पचास।"

"और दो रुपये के ?"

"तीन सौ।"

और ...., "ठहर जा"। दूसरे लड़के ने उसे टोकते हुए कहा। "अरे बाप रे ...., तीन सौ कंचे ....। इतनी बड़ी तो मेरी जेब भी नहीं है। तू और कंचे की बात करता है। नहीं, नहीं और नहीं।"

वे छोटे और नासमझ बच्चे अपनी जेब की क्षमता जानकर और बोझ की कल्पना से परेशान हो उठे थे, लेकिन हम समझदार लोग अब भी बेफिक्र हैं। कहां 20-22 करोड़ की आबादी अब उतनी ही बड़ी भारत भूमि पर 68 करोड़ 38 लाख हो गई है। यह आबादी? मेरे पुरखे कहा करते थे—बेटा, जितनी बड़ी चादर हो, उतने ही पैर फैलाने चाहिएं। उस जरा से बच्चे ने अपनी जेब की औकात देख कर ही, कंचों का हिसाब लगाना छोड़ दिया था, एक हम हैं कि ....मैं कभी अपनी चादर को देखता हूं, कभी अपने पैरों की बढ़ती लम्बाई को।

सवाल कंचों का नहीं है, चादर और पैरों की लम्बाई का भी नहीं है सवाल देश की आबादी का है, जो "सुरसा" की तरह दिन ब दिन बढ़ती जा रही है और हम हैं कि खड़े-खड़े गुबार देख रहे हैं। चाहिए तो ये कि हम आगे आएं, बीसवीं सदी के कदम से कदम मिला के चलें, और अन्दाजा लगाएं कि हम कहां आगे हैं और कहां पीछे हैं।

जी हां, सबसे बड़ा पिछड़ापन तो यही है कि हमारा परिवार दिन ब दिन इंसानियत की हद को पार करता चला जा रहा है। जिसके जितने ज्यादा बच्चे होंगे, वह उतना ही पिछड़ा माना जाता है। आप घर से शाम के वक्त सैर को निकले हैं, साथ ही अगर नौनिहालों की ब्रिगेड दिखाई दी कि आप 'पिछड़ा' करार दे दिए जाएंगे। मगर, अगर आपके साथ एक ही प्यारा सा मुन्ना या मुन्नी है तो देखने वाला फौरन आह भर उठेगा "हाय, क्या ही खूबसूरत गृहस्थी जा रही है।"

जनता जागरुक है

यह तो मैं नहीं कह सकता कि देश का प्रत्येक नागरिक सोया हुआ है। मैं अपने पेशे के आधार पर कह सकता हूं कि देश के 80 प्रतिशत लोग आज "लाल तिकोन" के महत्व को जानते और समझते हैं, उसकी अच्छाइयों से प्यार करते हैं। उसके हर नियम और उपनियम का भरसक पालन करने की कोशिश करते हैं। यह अलग बात है कि उसमें वे कितने सफल होते हैं। आखिर इंसान तो इंसान ही है, गलती कर ही बैठता है। वह घबराता है केवल आज की मंहगाई से। सोचता है उतने बच्चे हों, जितनों का पालन-पोषण अच्छी तरह से किया जा सके। अच्छी शिक्षा दे कर अच्छा नागरिक बनाया जा सके। आजकल के समय में आप एक या दो बच्चों की ही अच्छी शिक्षा का प्रबन्ध कर सकें तो गनीमत समझो।

अभी एक ताजा मिसाल मैं आपको बताता हूं। श्री विज, उनके परिवार की चिकित्सा का जिम्मा मेरा है। अपनी तीन वर्ष की बच्ची को स्कूल में दाखिले के लिए परेशान। अफसर हैं, चार अंकों में मासिक आय। मैंने शिक्षा विभाग के अधिकारी से कह कर दाखिला दिला दिया। जब वे दाखिले की फीस जमा कराकर लौटे तो बोले—चौदह सौ देना पड़ा है, पब्लिक स्कूल में।

मैं सुन कर दंग रह गया। एक साधारण नागरिक जो चार या पांच सौ रुपये कमाता है, अच्छी शिक्षा कैसे दिला सकता है। गनीमत रही है कि उन सज्जन की मासिक आय अच्छी है। पुत्र-पुत्री केवल दो सन्तानें हैं। इन पंक्तियों के पढ़ने के बाद शायद वे भी पक्का इरादा कर लें कि 'बस'। आम आदमी की बात मैं इस लिए सोचता हूं कि वह साधारण आय वाला आदमी 5–6 जीवों को दुनियां में लाकर कौन सा पुण्य कमाता है। मैं तो कहता हूं, इससे बड़ा पाप और क्या होगा, जो आम बच्चों को आवारा कुत्तों की तरह छोड़ देता है जो दूसरों की हंडिया ताकते फिरते हैं। क्या हक है किसी को ऐसी औलाद को जन्म देने का जिसे वह अच्छी शिक्षा न दे सके और अच्छा खाना न दे सके।

मेरे अनुमान से ऐसे लोगों की अब कमी नहीं है, जो ये बातें समझते न हों, या सोचते न हों, वे लोग अक्सर ही निजी क्लीनिकों में अथवा सरकारी दवाखानों में जाकर समय-समय पर चिकित्सकों से सलाह लेते हैं। दकियानूसी ख्याल लोग छोड़ते जा रहे हैं।

एक गांव का आदमी, पूर्वी उत्तर प्रदेश का, जहां के लोग अधिक भीरू होते हैं, अपनी पत्नी को मेरे पास चिकित्सा के लिए लाया। उसके कोई सन्तान नहीं थी। उम्र भी दोनों पति-पत्नी की क्रमश: 25 और 20 रही होगी। पत्नी के स्वास्थ्य के कारण मैंने उसे सलाह दी कि इस समय तुम्हारी पत्नी की ऐसी अवस्था नहीं है कि यह बच्चे को जन्म दे सके। आगे ईश्वर और देगा, इस समय इसका गर्भपात करा दो। मैं मन ही मन उसकी प्रसंशा करता रहा कि बच्चे के लिए परेशान रहने पर भी उसने मेरी सलाह पर गर्भपात करा दिया। अब तीन वर्ष बाद जब उसकी पत्नी स्वस्थ हो गई, उसकी गोद में हंसता-खेलता मुन्ना है।

समझदार नागरिकों का आजकल यही प्रयास रहता है कि जिस प्रकार भी हो दो या तीन से अधिक बच्चे न हों। इस प्रकार पत्नी का स्वास्थ्य भी सुन्दर बना रहे और परिवार पर अनावश्यक बोझ भी न पड़े। स्वस्थ शरीर सुन्दरता की निशानी है तथा सौन्दर्य सुख का आधार है। नाक चाहे सीधी पकड़ो या हाथ गरदन के पीछे लेकर, पकड़ी नाक ही जाएगी। सुख-समृद्धि तभी होगी जब अच्छी शिक्षा मिलेगी। अच्छी शिक्षा तभी मिल सकती है जब घर धन-धान्य से भरा होगा तथा घर भरपर तभी रहेगा जब उसके भोगने वाले सीमित होंगे। अर्थात् संतान कम होगी। संतान कम होगी तो गृहस्वामिनी का स्वास्थ्य व सौंदर्य बरकरार रहेगा। तभी उसका घर स्वर्ग समान होगा।

परिवार नियोजन कब से

सन् 1798 में परिवार नियोजन के बारे में एक निबंध छपा था। वहीं से इसका प्रारंभ माना जाता है। इसके बाद सन् 1833 में अमेरिका के प्रसिद्ध चिकित्सक डा० चार्ल्स नोल्टन ने "द फर्स्ट फिलासफी" नाम की किताब लिखी। इसमें उन सभी उपायों का विस्तृत विवरण था जिनके प्रयोग से गर्भ को अवश्य ही रोका जा सकता था। इसकी हजारों प्रतियां ब्रिटेन में गुप्त रूप से बांटी गईं। इसी पुस्तक को जब श्रीमती एनीबेसेण्ट तथा चार्ल्स ब्रेडला ने सन् 1876 में दुबारा प्रकाशित किया तो उन पर "अश्लील साहित्य" तथा सदाचार पर बुरा प्रभाव डालने वाला बता कर मुकदमा चलाया गया। उन्हें अदालत ने अपराधी करार दिया। लेकिन इसका परिणाम उल्टा हुआ। जनता को जब पता चला कि वास्तव में कुछ उपाय ऐसे हैं जिनसे गर्भ रोका जा सकता है तो यह अन्दोलन जोर पकड़ता गया।

भारत में भी इस विषय पर चर्चा हुई कि यह जायज है या नाजायज, अक्तूबर, 1892 में बम्बई हाई कोर्ट ने इसे अश्लीलता से परे माना। तभी सर्वप्रथम मैसूर स्टेट ने इसे अपने यहां प्रचार व प्रसार की इजाजत दी।

भारत की प्रसिद्ध मासिक पत्रिका "चांद" के जुलाई 1931 के अंक में लिखा है —केवल देश की जनसंख्या से ही देश की शक्ति को तोलना भूल से भरा हुआ है। भारत की जनसंख्या देखने में अवश्य बहुत बड़ी है पर इससे यह निष्कर्ष निकालना कि "देश उन्नति के पथ पर है" बड़ी भूल की बात होगी। संख्या में बड़े होने की अपेक्षा बुद्धि, बल और पौरुष बड़ा होना ही प्रशंसनीय और वांछनीय है। दुनिया के नक्शे में रोम और ग्रीस का आकार कितना था? पर उन्होंने साम्राज्य स्थापित किए। अधिक दूर जाने की आवश्यकता नहीं, छोटे से देश जापान ने अभी हाल ही में क्या से क्या कर दिखाया। इतिहास में ऐसे एक नहीं अनेक उदाहरण हैं कि जो जाति संख्या में छोटी है, पर गुणों में बड़ी है, उसे उस जाति की अपेक्षा जो जाति संख्या में बड़ी है, पर गुणों में हीन है, उन्नत और भाग्यशाली होने का अधिक अवसर मिलता है। इसलिए हमें संख्या में बड़े बनने की अपेक्षा योग्यता में बड़े बनने का ध्येय रखना चाहिए। कहा भी है—

> जननी जने तो ऐसा जने, कै दाता कै शूर।
> नहि तो रहिजे बाँझड़ी, मति गंवावे नूर।।

ये बात मैं आपको उस समय की बता रहा हूं जब भारत की आबादी 25 से 28 करोड़ थी। अब तो भारत की जनसंख्या तीन गुनी अधिक है 1981 की नई जनगणना के अस्थाई आंकड़ों के अनुसार हमारी आबादी 68 करोड़ 38 लाख से अधिक है। स्वतंत्रता के बाद से हमारी जनसंख्या लगभग दुगनी हो गई। अगर आबादी इसी तरह बढ़ती रही तो 2000 ई० में हमारी जनसंख्या 100 करोड़ तक पहुंच जाएगी। अतः परिवार नियोजन हमारे लिए अत्यावश्यक है। ऐसा न किया गया तो हमारी सारी आर्थिक प्रगति निरर्थक हो जाएगी।

अतः यह उचित ही है कि छठी पंचवर्षीय योजना में ऐसी प्रक्रिया शुरू करने पर बहुत जोर दिया गया है जिससे कि सम्पूर्ण देश में प्रजनन-दर और कम की जा सके। यह भी जरूरी है कि परिवार नियोजन के कार्यक्रम को सभी विवादों से परे रखा जाए। जनसंख्या को सीमित करना एक राष्ट्रीय तकाजा है इसमें सभी का सहयोग मिलना चाहिए। □

छोटा परिवार

सुखी परिवार

प्रौढ़ शिक्षा अभियान को सफल बनाने के मूलमन्त्र

लेखराम चौहान

देश के ग्रामीणों को लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं से अवगत कराने और उन्हें अपने सामाजिक एवं आर्थिक जीवन को ऊंचा उठाने के लिए प्रौढ़ शिक्षा योजना लागू की गई है। इस योजना के द्वारा देश के ग्रामीण और शहरी प्रौढ़ों को साक्षरता स्तर तक लाया जाएगा, जिससे वे अपनी प्रगति आप कर सकें और अपने दृष्टिकोण में व्यापकता ला सकें। इस दिशा में कार्य प्रारंभ भी हो गया है।

देश के साथ-साथ प्रदेश में भी इस क्षेत्र में कुछ कठिनाइयां अनुभव की जा रही हैं। व्यवस्था संबंधी समस्याओं को तो शासन अपने प्रयत्नों से हल कर रहा है और वे हल हो ही जाएंगी किन्तु इस क्षेत्र का दूसरा और महत्वपूर्ण पक्ष प्रौढ़ों की शिक्षा और विशेष कर इस शिक्षा के प्रति उनकी अरुचि और उदासीनता है।

प्रौढ़ शिक्षा में प्रौढ़ों की रुचि जाग्रत कराने के लिए हमें प्रौढ़ मनोविज्ञान का अध्ययन कर उसे उनके अनुरूप बनाना होगा। वास्तव में यह एक ऐसा पक्ष है जिसकी सफलता में ही इस कार्यक्रम की सफलता निहित है। प्रौढ़ शिक्षा समाज शिक्षा का वह अंग है जिसके द्वारा हमें प्रौढ़ों को समाजोपयोगी घटक बनाना है। बच्चों में तो शिक्षा के प्रति रुचि इस कारण भी होती है कि उन्हें स्कूल में खेलने, अन्य साथियों के साथ रहने आदि की सुविधा उपलब्ध होती है। अन्य बच्चों के सम्पर्क में आने से उन्हें अनेकानेक सुख मिलते हैं। उनकी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है जबकि प्रौढ़ शिक्षा में प्रौढ़ इन आवश्यकताओं से वंचित रहते हैं। अतः प्रौढ़ शिक्षा के इस कार्यक्रम में प्रौढ़ शिक्षा कार्यकर्ताओं को ऐसा वातावरण निर्मित करना चाहिए कि वे इस कार्यक्रम के प्रति उत्साहित हों और इनके लाभों से परिचित होकर स्वयं इसमें रुचि दिखाएं। प्रौढ़ों की जिज्ञासाएं सीमित होती हैं। प्रौढ़ों को शिक्षित करने के पूर्व शिक्षकों को अपने मस्तिष्क में एक ऐसी योजना बनानी चाहिए कि प्रौढ़ उसके प्रति आकर्षित हों।

प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम को साक्षरता तक ही सीमित न रखा जाए। कोई भी प्रौढ़ एक दिन में तो साक्षर हो नहीं जाता, इसलिए इस दिशा में ऐसा कार्यक्रम बनाना चाहिए कि वह पढ़ने के प्रति उत्साहित हो और मन ही मन उसमें पढ़ने की ललक पैदा हो। अक्षर ज्ञान का लाभ उसे अपने दैनिक जीवन में महसूस हो। यह लाभ उसे अपने कृषि यन्त्र खरीदने, ऋण प्राप्त करने, शासकीय सुख सुविधाएं प्राप्त करने, कृषि साहित्य पढ़ने, अपना हिसाब-किताब करने में महसूस हो। साक्षरता का यह पक्ष श्रमिकों और खेतिहर मजदूरों में एक नया दृष्टिकोण विकसित करेगा।

साक्षर प्रौढ़ अपने आप में एक नया परिवर्तन अनुभव करता है। इस परिवर्तन और उत्साह को स्थायित्व प्रदान करने के लिए उनकी रुचि के अनुकूल साहित्य, पत्र-पत्रिकाएं पढ़ने को देनी चाहिए। इस नए साहित्य में चाहे हितोपदेश की कहानियां हों अथवा खेती संबंधी नई जानकारी किन्तु सरल भाषा में होनी चाहिए। यदि प्रौढ़ साक्षर पढ़ने में कहीं गलती करता है तो उसे अपमानित अनुभव न होने दें बल्कि उसका ध्यान इस ओर ऐसे दिलाएं कि वह स्वयं अनुभव करें और भविष्य में शुद्ध वाचन करने लगे।

प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम में आयु वर्ग की रुचियों पर अवश्य ध्यान दें। 25-30 वर्ष आयु के प्रौढ़ सामयिक घटनाओं और राजनैतिक परिवर्तनों में विशेष रुचि रखते हैं। इस वर्ग के लोगों (प्रौढ़) को राजनैतिक गतिविधियों एवं विकास कार्यक्रमों संबंधी नई-नई जानकारी मौखिक प्रदान करें। रेडियो समाचारों के द्वारा भी उन्हें इस ओर आकर्षित किया जा सकता है। अपने शिक्षा केन्द्र पर समाचार-पत्र अवश्य मंगाएं। विशेषकर 'अपना देश' समाचार-पत्र इस दिशा में काफी लाभ दे सकता है। उसके चित्रमय समाचार प्रौढ़ों को रुचिकर लगते हैं। जब पढ़ने योग्य विषय-वस्तु सामने होगी तो प्रौढ़ पढ़ना अवश्य चाहेंगे, और इस पृष्ठभूमि का लाभ उन्हें साक्षर करने के लिए उठाएं।

नए-नए साक्षर प्रौढ़ अपने उद्योग-धन्धों में भी प्रगति लाना चाहते हैं। सामाजिक समस्याओं पर भी वे विचार-विमर्श करना चाहते हैं। नए-नए प्रयोगों की जानकारी द्वारा भी वे लाभान्वित होना चाहते हैं। इसलिए प्रौढ़ शिक्षा कार्यकर्ता अथवा शिक्षक उनकी इन रुचियों और जिज्ञासाओं का लाभ उन्हें जानकारी देने में उठाएं। यदि उनके व्यवसायों से संबंधित (खेती, बागवानी, सब्जियों, फलों के उत्पादन) जानकारी उन्हें मिलती है तो वे शिक्षक को बड़ा ज्ञानी समझते हैं और उनमें उनकी गहरी आस्था और विश्वास प्रकट होने लगता है। ऐसे कार्यकर्ता अपने उद्देश्यों में अवश्य सफल होते हैं।

प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र को अधिक आकर्षक बनाएं। ग्राम का पंचायत घर, सभा भवन, स्कूल अथवा अन्य कोई ऐसा ही स्थान इसके लिए उत्तम सिद्ध हो सकता है। उद्देश्य यह कि इसे आकर्षित स्थल बनाएं। दीवारों पर चित्ताकर्षक पोस्टर, चित्र, श्लोक, वाक्य और नारे आदि लिखे हों, जिन्हें प्रौढ़ सरलता से पढ़ने का प्रयत्न करें। प्रौढ़ों में इसे पढ़ने के लिए प्रतियोगिता हो यह प्रतियोगिता उन्हें पढ़ने के लिए उत्साहित करेगी। इस कार्य में पंचायत सहयोग प्रदान कर सकती है। प्रौढ़ शिक्षा का केन्द्र ऐसे स्थान पर हो जहां प्रौढ़ आने में संकोच न करें और उसे अपनी ही संस्था समझ कर आएं। इन केन्द्रों पर आने वाले सभी प्रौढ़ों के साथ समानता और स्नेह का व्यवहार करें। यहां आने में प्रौढ़ एक अपूर्व आनन्द का अनुभव करें ताकि वे दिन भर की थकान यहां आकर भूल जाएं।

दलगत राजनीति को अपने केन्द्र पर न आने दें। यह प्रयत्न करें कि प्रौढ़ परस्पर भेद-भाव की चर्चाएं केन्द्र पर न करें। समान शिक्षा की यह मूल भावना है कि ग्रामीण अपने परस्पर भेदभाव भुलाकर एकता स्थापित करें। इस प्रकार का बना हुआ वातावरण ग्रामीणों में परस्पर स्नेह—सूत्र स्थापित करेगा और ग्रामीण लोग मुकदमेबाजी से भी बच सकेंगें। प्रौढ़ शिक्षा इस दिशा में सशक्त उपाय हो सकती है।

प्रौढ़ शिक्षा की सफलता का आधार कार्यकर्त्ताओं (शिक्षकों) का आचरण है। जिसे वे परस्पर सहयोग, स्नेह और सद्भाव के साथ पूरा करें तो यह कार्यक्रम अवश्य ही सफल होगा। प्रौढ़ों के प्रति शिक्षकों की सहानुभूति ही इस संदर्भ में हमारी आशाएं और सफलताओं का आधार है।

देश में व्याप्त निरक्षरता और पिछड़ापन दूर करने के लिए निष्ठावान कार्यकर्त्ता प्रौढ़ शिक्षा के लक्ष्य को पा सकेंगे। किसान को समाज शिक्षा में दीक्षित कर सकेंगे। □

"अस्पृश्यता" गांधी जी की दृष्टि में

"अस्पृश्यता जिस रूप में हम सब उसे जानते हैं, एक जहरीला कीड़ा है जो हिन्दू धर्म की जड़ को खा रहा है।"

"इसमें कोई संदेह नहीं कि अस्पृश्यता हमारे पास प्राचीन प्रथाओं के रूप में आई है लेकिन ऐसी तो बहुत सी बुरी प्रथाएं चली आ रही हैं जिनमें अस्पृश्यता सबसे निकृष्ट है।"

"अस्पृश्यता की भावना के पीछे कोई विवेक नहीं है, वह तो एक अमानुषिक प्रथा है जो अब मिट रही है।"

"अस्पृश्यता का मूल उद्‌गम धर्म में नहीं है। उच्चता के झूठे अहंकार ने ही अस्पृश्यता को जन्म दिया है। अपने से दुर्बलों को हम पैरों तले दबाए रहे इसी मनोवृत्ति से अस्पृश्यता पैदा हुई है।"

"हिन्दू धर्म अनेक रूढ़ियों से घिरा हुआ है। उनमें से कुछ रूढ़ियां प्रशंसनीय हैं, शेष निन्द्य हैं। अस्पृश्यता की रूढ़ि तो सर्वथा ही निन्द्य है। मैं इस रूढ़ि को पाखंड कहता हूं।"

"मेरा ऐसा विश्वास है कि यदि समय रहते हमने अस्पृश्यता को निर्मूल न किया तो हमारा कहीं नामों-निशान भी न रहेगा। अस्पृश्यता जैसा घोर पाप दूसरा है ही नहीं, क्योंकि इसका प्रयोग धर्म के नाम पर किया जाता है।"

"अपने आपको हिन्दू कहने में मुझे गर्व का अनुभव इसलिए होता है कि यह शब्द मुझे इतना व्यापक लगता है कि यह न केवल पृथ्वी के चारों कोनों के पैगम्बरों की शिक्षाओं के प्रति सहिष्णु है, बल्कि उन्हें आत्मसात भी करता है। इस जीवन संहिता में मुझे अस्पृश्यता का कोई समर्थन नहीं मिलता।"

"अस्पृश्यता निवारण आन्दोलन में मुख्य बात तो उन लोगों के प्रति होने वाले सामाजिक तथा धार्मिक अन्यायों को खत्म करना है जो आज अस्पृश्य कहलाने के कारण जिस धर्म के वे अनुयायी हैं उसी धर्म की तमाम सार्वजनिक सुविधाओं और आध्यात्मिक शांति सांत्वना के साधनों से वंचित कर दिए गए हैं।"

"अस्पृश्यता की भावना में घृणा का अन्तर्भाव निहित है। अस्पृश्यता का विचार-दोष धर्म से अवश्य दूर कर देना होगा।"

"जब तक हम अस्पृश्यता के इस दोष से मुक्त नहीं हो जाते, तब तक हम स्वराज्य भोगने योग्य हैं या नहीं, यह एक बड़ा सवाल बना रहेगा। इस घोर पाप से मुक्त होने के लिए हमें ऐसा कठोर और सतत प्रयत्न करना पड़ेगा, इस प्रकार के प्रयत्न में ही हमारी उन्नति निहित है।"

"अस्पृश्यता के पाप से मुक्ति हृदय शुद्धि से ही मिल सकती है। हमारा काम हार्दिक भावना से ही हो सकता है, कृत्रिमता से नहीं।"

"एक बार अपने अन्दर से अस्पृश्यता और उसके साथ ही ऊंच-नीच की भावना को निकाल देने के बाद हम देखेंगे कि सभी जातियों और धर्मों में एक आधारभूत एकता मौजूद है। अस्पृश्यता निवारण में इस बात पर प्रतीति निहित है कि विविधता में एकता है।"

"मेरा यह विश्वास है कि यदि अस्पृश्यता जड़ से खत्म हो जाए तो इससे न केवल हिन्दू धर्म का एक भयानक कलंक दूर हो जाएगा, बल्कि इसका प्रभाव विश्वव्यापी होगा।"

"अस्पृश्यता जैसी बुराइयों को जड़ से उखाड़ने के लिए जागरूक लोक मत तैयार करने के समान शक्तिशाली दूसरा कोई उपाय नहीं है।"

"अस्पृश्यता मिटाने का दूसरा और व्यापक अर्थ है, संसार में भातृभाव फैलाना और धर्मों का एकीकरण करना।"

"अस्पृश्यता निवारण का अर्थ है स्वर्ण हिन्दू का हृदय परिवर्तन।"

"अस्पृश्यता का समाधान हमें और अधिक एकता की दिशा में ले जाएगी।"

(संकलनकर्त्ता—कृष्ण गोपाल सिन्हा)

मनोहारी वातावरण के लिए

भूदृश्य रचना आवश्यक

गेंदा लाल शर्मा

आधुनिक समय में उद्यान निर्माण कला की बहुत उन्नति हो रही है और औपचारिक तथा अनौपचारिक (फौरमल एण्ड इनफौरमल) उद्यान की पुरानी विचारधारा अब नहीं रही है। मुगलकालीन उद्यान कला का मनोहारी रूप भी भवन-निर्माण कला की पुरानी शैली के साथ समाप्त हो गया है। भवन-निर्माण कला में परिवर्तन के साथ-साथ उद्यान रचना की शैली, रूपरेखा और पद्धति भी बदल रही है। अब शोभा और फूल वाले पेड़, झाड़ियां, लताएं एवं घास के लगाने मात्र से ही उद्यान नहीं बनता है। सुन्दर उद्यान योजना के लिए कलात्मक सौंदर्य भावना के साथ-साथ वनस्पति विज्ञान, बागवानी, शिल्पकला और भवन निर्माण कला का बोध होना भी अति आवश्यक है। व्यक्तिगत या सार्वजनिक स्थलों का, जो आकार में छोटे हों या बड़े, कलात्मक वृक्षारोपण एवं कृत्रिम संरचनाओं द्वारा, सुयोजित विकास एवं संरक्षण जो मनुष्य के दैनिक कार्य, विश्राम, खेल एवं मनोरंजन के लिए सौंदर्यमय और रमणीक वातावरण प्रदान करें, लैण्डस्केप कहलाता है। इसको हिन्दी में भूदृश्य रचना अथवा भूदृश्य अंकन भी कहते हैं। परन्तु अधिक उपयुक्त शब्द भूदृश्य रचना ही है क्योंकि इसके द्वारा कला के मूलभूत सिद्धान्त रंग, रचना, आकार, आकृति, अनुपात रूप, लय, ताल, माप और सन्तुलन का बोध होता है। लैंडस्केप आर्कीटैक्चर हमारे देश में अभी शिशु अवस्था में है। कुछ लोगों को तो इस शब्द को सुन कर ही आश्चर्य होता है कि यह क्या है। लैंडस्केप फ्रेंच भाषा में एक व्यापक शब्द है। आर्कीटैक्चर की भान्ति यह भी मनुष्य के वातावरण के निर्माण से सम्बन्धित है। दोनों कलाओं में जहां बहुत समानता है वहां एक बहुत बड़ा अन्तर भी है। आर्कीटैक्चर में ईंट, पत्थर, लोहा, सिमेंट, बालू, लकड़ी आदि निर्जीव और स्थिर पदार्थों द्वारा निर्माण कार्य होता है। लैंडस्केप में सदैव परिवर्तनशील पदार्थों द्वारा रचना की जाती है। इसकी दो मुख्य आवश्यकताएं हैं--एक तो भूमि स्वयं अपने ऊंचे-नीचे धरातल, पहाड़ और पानी सहित और दूसरी वनस्पतियां जिसमें घने विशाल वन वृक्षों से लेकर छोटी घास तक शामिल है।

किसी भी राष्ट्र के स्वस्थ एवं सन्तुलित विकास के लिए भौतिक सम्पत्ति एवं साधनों की आवश्यकता तो है ही परन्तु स्वस्थ एवं सुन्दर वातावरण भी बहुत महत्वपूर्ण है। शारीरिक विकास के लिये सन्तुलित आहार जितना आवश्यक है, मानसिक तथा बौद्धिक विकास के लिए प्रकृति और प्राकृतिक वातावरण भी उतना ही महत्वपूर्ण है। वातावरण को सुन्दर बनाने में शोभाप्रद पत्ती और फूल वाले पेड़-पौधों का बहुत महत्व है। पर्वतमालाएं, फूलों से भरी रंगीन घाटियां, आकाश को चूमते वृक्ष, कलकल निनाद करते झरने, द्रुतगति से बहती और गरजती पहाड़ी जलधाराएं, गम्भीर और मंथर गति से मैदानों में बहती सरिताएं, फूलों की सुगन्धि से सुरभित वातावरण, उदित और अस्त होते सूर्य की अलौकिक झांकियां, जलाशयों में विहार करते-पंख फड़फड़ाते सारस, बगुले, बत्तख और हंस, पक्षियों के मधुर संगीत से गूंजता वायु-मण्डल, ऐसे प्राकृतिक दृश्यों से भरे वातावरण में, ईश्वर और जीवित सौंदर्य के दर्शन होते हैं। सत्य एवं सौंदर्य के आधारभूत सिद्धान्त की अनुभूति होती है।

सहस्रों वर्ष पहले हमारे पूर्वज ऐसे ही प्राकृतिक वातावरण में रहकर अध्यात्मवाद के उच्च शिखर पर पहुंचे थे। उन्हें वृक्षों और फूलों से बहुत प्रेम था। उन दिनों कचनार, कदम्ब, अशोक, चम्पा, नगकेसर, पलाश, सैमल आदि जैसे सुन्दर फूल वाले पौधों की मन्दिरों के पास भरमार थी लेकिन आजकल तो पूजा के लिए भी फूल दुर्लभ हैं। मनुस्मृति में फलदार, फूल वाले और दूसरे पेड़ों के काटने पर दण्ड की व्यवस्था है। उसी में राजा को आदेश है कि वह दीर्घायु वाले पीपल, बरगद, गूलर, पलाश, सैमल और साल के पेड़ लगावे। शकुन्तला कण्व ऋषि के आश्रम में पुष्प आभूषणों से सज्जित हो दुष्यन्त से मिलती है। सीता जी और द्रौपदी का प्रकृति प्रेम रामायण और महाभारत में उनके वनवास के काल में वर्णित है। सीता जी को अयोध्या के वैभवपूर्ण राजमहलों में कभी-कभी वनश्री के दर्शनों की अभिलाषा होती थी। वे राम से कहती थी, "मेरी इच्छा है कि मैं एक बार फिर वन में हरे-भरे वृक्षों की छाया में भ्रमण करूं और भागीरथी के निर्मल जल में स्नान करूं।" अति प्राचीन काल से ही फूलों की कलाकृतियां नारी द्वारा भूमि, द्वार और प्रांगण में बनाई गई हैं। आज भी दक्षिण भारत में महिलाएं केश सज्जा में फूलों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में करती हैं।

दुर्भाग्यवश आधुनिक काल में मनुष्य का प्राकृतिक परिस्थितियों से सम्बन्ध विच्छेद हो गया। इस शताब्दी की

औद्योगिक क्रान्ति के कारण नगरों में बहुत लोग बसने लगे। देहात से लोग जीविका उपार्जन के लिए शहरों में आने लगे। गन्दी और घनी नई बस्तियों ने बड़े-बड़े नगरों को घेर लिया। जनसंख्या की वृद्धि तीव्र गति से हुई। यातायात के साधन बढ़े। नगरों उपनगरों का जीवन घुटन भरा हो गया। सारा वातावरण धुआं, धुंध, धूल, ध्वनि, अन्धकार और दुर्गन्ध से प्रदुषित होने लगा। प्राकृतिक वातावरण से विलग, ईंट-पत्थरों के विशाल भवनों में बन्द, पेट्रोल की दुर्गन्ध में पलता आज का मनुष्य दुखी और अपाहिज हो गया। यक्ष्मा, सूखा रोग और स्नायविक दुर्बलता पनपने लगी। शरीर और मन निरन्तर शिथिल होता गया। आत्मा पथ भ्रष्ट होकर मुरझा गई। जीवन के वास्तविक आनन्द, धूप, खुले स्थान, स्वच्छ वायु, आकाश और हरियाली की झलक पाने को मनुष्य छटपटाने लगा।

ऐसे समय में लैंडस्केप द्वारा ही प्रकृति और मनुष्य में पुनः सम्पर्क स्थापित होना सम्भव है। लैंडस्केप, संगीत की भान्ति एक संवेदनशील ललित कला है। इसमें भी ताल और लय के सन्तुलन का ध्यान रखा जाता है। शोभाकर और फूल वाले पौधों का उनके रूप, आकृति, आकार और फूलों के रंग के अनुसार सुयोजित रोपण, व्यवस्था एवं संरक्षण होता है। पहाड़, झरना, जलाशय, पुल आदि की कृत्रिम संरचना होती है। प्रमुख दृश्यों तक सुगमता पूर्वक आने-जाने को पगडण्डियों का निर्माण करते हैं। कोमल हरी घास का गलीचा बनाते हैं। समस्त रचना और रूपरेखा द्वारा प्रकृति भूमि के रूप और निर्माण कार्यों में सामजस्य और समरूपता स्थापित होती है। परम शांत और रमणीक स्थान का निर्माण होता है और मनुष्य प्राकृतिक वातावरण के सम्पर्क में आता है। उसके जीवन में समरसता आती है जो छोटी-छोटी रुकावटों के प्रति उपेक्षा की भावना पैदा कर, साधारण बातों से उत्पन्न क्षोभ सहने की शक्ति देती है। मनोबल प्रबल और इच्छा शक्ति विकसित होती है। शीतल, सुखद और शांत वातावरण में मनुष्य, जीवन की सारी चिन्ताएं भूल आत्मचिन्तन और मनन में लीन हो जाता है।

सुन्दर फूल सबको आकर्षित कर सौंदर्य-चेतना जाग्रत करते हैं। वे बुरे विचारों को दूर कर अच्छे और ऊंचे विचार पैदा करते हैं और मस्तिष्क को परिष्कृत करते हैं। उनकी भाषा मूक होती है। उनका खिलना जीवन के रहस्य की सहज अभिव्यक्ति है। पुष्प निरूपण एवं चिन्तन में, मनष्य की अंतरात्मा तथा प्रकृति का बाह्य रूप मिलकर एक हो जाते हैं। एक अभूतपूर्व अवैयक्तिक आनन्द प्राप्त होता है। भावनाएं भौतिकवाद को छोड़ आध्यात्मवाद की ओर प्रवाहित होने लगती हैं। लैंडस्केप योग दर्शन के अति निकट है। योग द्वारा मनुष्य के गुणों में एक सन्तुलन-सामजस्य स्थापित होता है। लैंडस्केप का कार्य भी मनुष्य की साकारात्मक और नकारात्मक शक्तियों में सन्तुलन स्थापित करना है। मस्तिष्क पर रंग-बिरंगे फूलों की विभिन्न प्रतिक्रियाएं होती हैं और उनमें गहन प्रतीकवाद का रूप देखने को मिलता है। सफेद फूल आध्यात्मिक सौंदर्य और पवित्रता के प्रतीक हैं तो अग्नि और रक्त जैसे लाल फूल श्रम, वीरता, त्याग और क्रोध की भावना पैदा करते हैं जबकि पीले और नारंगी फूल सौंदर्य, प्रसन्नता, आशा और उत्साह का संचार करते हैं। गुलाबी फूल इन्द्रियार्थ सौंदर्य के चिन्ह माने जाते हैं। इस प्रकार विभिन्न रंगों के फूलों द्वारा मस्तिष्क की अवस्था प्रभावित होती है और चित्तवृत्ति और विचारधारा में परिवर्तन होता है। निश्चित ही लैंडस्केप एक मानसिक साधना है जिसके द्वारा बौद्धिक एवं आत्मिक विकास होता है। किसी भी देश या जाति के सांस्कृतिक विकास में इसका बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है। अतः इस कला का जितना अधिक प्रसार होगा, राष्ट्र का मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक स्वास्थ्य भी उतना ही पुष्ट होगा। अत्याधिक प्रसन्नता और उत्साह की बात है कि हमारे यहां भी लैंडस्केप अब लोकप्रिय होती जा रही है और सभी इस ओर आकर्षित हो रहे हैं। ☐

भूदृश्य रचना अधिकारी,
हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय,
हिसार

विश्व में यह भेद का व्यवहार कैसा

एक हरि के अंश से ही,
मानवों की सृष्टि सारी।
अस्थि चर्मावृत सभी हैं—
एक सम ही देहधारी।

फिर मनुज में ऊंच नीच के,
भेद का आचार कैसा।
विश्व में यह भेद का व्यवहार कैसा।

उठ खड़े हो निज देश के,
इस अंग को सत्वर संभालो,
आज हरिजन बन सभी तुम—
इन हरिजनों को फिर उठालो।
सूर्य शशि की उष्ण शीतल,
किरण सबको सम मिली है।
लोक बन की विविध कलियां—
साथ ही सारी खिली हैं।

फिर एकता में श्रेष्ठता का—
एक को अधिकार कैसा।
विश्व में यह भेद का व्यवहार कैसा।

हीरालाल नन्दा 'प्रभाकर'

गांधीजी और ग्रामोद्योग

सुरेन्द्र अग्रवाल

गांधीजी की विचारधारा पर जहां भारत की संस्कृति और स्थिति, मां पुतलीबाई की धार्मिक भावना तथा नैतिक संस्कार का प्रभाव था, वहां रस्किन, थोरो, कारपेंटर और टालस्टाय आदि पाश्चात्य विद्वानों के चिन्तन ने भी गांधी जी के विचारों को नया मोड़ दिया। इन सबने मिलकर, बापू के हृदय में जिस विचारधारा को विकसित किया, वह सर्वोदय की विचारधारा थी। शायद इसीलिए गांधीजी ने आजाद भारत की जो कल्पना मन में संजोई थी, उसको रामराज्य का नाम दिया था। गांधी जी के राम राज्य में सर्वोदय व्यवस्था पर सबसे अधिक बल दिया गया है। भारत गांवों में बसा हुआ है। इसीलिए भारत में तो सर्वोदय व्यवस्था ग्राम प्रधान ही हो सकती है। ग्राम प्रधान व्यवस्था में विकास के लिए गांधी जी के अनुसार जो उपयोगी कार्यक्रम माने गए हैं उनमें खादी और ग्रामोद्योग प्रमुख हैं।

ग्राम योजना में ग्रामोद्योग के स्थान के सिलसिले में गांधीजी ने कहा है कि "ग्राम योजना के पीछे भावना यह है कि हम अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति गांवों में करें, और जब हम यह देखें कि कुछ आवश्यकताओं की पूर्ति गांवों द्वारा नहीं हो सकती, तब हमें यह पता लगाना चाहिए कि क्या थोड़े से यत्न तथा संगठन द्वारा ग्रामीण जन ही लाभकारी ढंग से इन वस्तुओं की पूर्ति कर सकते हैं।" इसी बारे में में गांधीजी ने आगे कहा है, "ग्रामीणों को इतने ऊंचे दर्जे की कुशलता विकसित कर लेनी चाहिए कि उनके द्वारा तैयार चीज बाहर बाजार में तुरन्त बिक जाए। जब हमारे गांव पूर्ण रूप से विकसित हो जाएंगे तब उनमे ऊंचे दर्जे की कुशलता तथा कलात्मक प्रतिभा वाले लोगों की कमी नहीं रहेगी। उनमें ग्रामीण कवि, ग्रामीण कलाकार, ग्रामीण शिल्पकार भाषाविद तथा संशोधन करने वाले होंगे। संक्षेप में जीवन की कोई ऐसी वांछनीय चीज न होगी जो गांवों में न पाई जाएगी। आज भारतीय गांव गोबर के ढेर हैं। कल वे नन्दन वन के समान हो जाएंगे। जिनमें अत्यन्त मेधावी लोग निवास करेंगे, जिन्हें न तो कोई ठग सकता है और न ही शोषण कर सकता है।"

गांधीजी ने 30 मार्च, 1940 के 'हरिजन' में लिखा, 'ग्रामीण सभ्यता हमें विरासत में मिली है। हमारा देश बहुत बड़ा है। इसमें करोड़ों लोग बसते हैं फिर इसकी आबोहवा और दुनिया में भौगोलिक स्थिति— इन सबने मिलकर मानों यह तय कर दिया है कि हमें ग्रामीण संस्कृति का विकास करना है।" और इधर, गांधीजी के सपने का आखिरी आदमी भी गांव छोड़कर शहर भागा जा रहा है, क्योंकि गांव में लुहार, चर्मकार, कुम्हार, जुलाहा यानी कि किसी ग्रामोद्योग के लिए जरूरी किसी कारीगर की तरह रहना उसके लिए असंभव हो चुका है। पीढ़ी दर पीढ़ी से चली आ रही कारीगर की कुशलता मिटती जा रही है। पर यह कैसे भूला जा सकता है कि भारत गांवों का देश है। गांव उजड़ते हैं तो देश उजड़ता है। गांवों की खुशहाली पर ही भारत की खुशहाली निर्भर करती है। बापू ने कहा था, "बहुत समय नहीं गुजरा है जब हमारा गांव अपनी जरूरत की चीज ही नहीं बनाता था बल्कि शहरों के लिए भी चीजें बना पाता था। यह हालत फिर वापस लाई जा सकती है। करना इतना ही है कि गांवों का आदमी, खेती से बचे वक्त में छोटे-छोटे औजारों से खुशनुमा और टिकाऊ चीजें बनाए। तब शहर का आदमी भी उन्हें लेने के लिए खुद गांव पहुंचेगा।"

ग्रामोद्योग से ग्रामीणों को रोजगार दिया जा सकता है। गांवों में ऐसी दस्तकारी से अनेक धंधे पनप सकते हैं, और ऐसे ग्रामोद्योग से गांवों से शहर की ओर भागने की समस्या भी सुलझ सकती है। साथ ही ग्रामोद्योग की प्रधानता वाली योजना भारत में बेकारी की समस्या से मुक्ति दिला सकती है। ग्रामोद्योग को अच्छा मानते हुए भी अकसर कहा जाता है कि गांवों में भी बड़े पैमाने पर उद्योगीकरण किया जाए या गांववाले चीजों के छोटे भाग बनाएं। इसमें स्विटजरलैंड की मिसाल भी दी जा सकती है। वहां बहुत से ग्रामीण परिवार घड़ियों के छोटे-छोटे हिस्से बनाते हैं और उन्हें बड़े कारखानों में इकट्ठा करके मशहूर घड़ियां तैयार की जाती हैं। अमेरिका में भी कपड़े, मोजे, स्वेटर आदि के उद्योग में ऐसा ही किया गया। पर बड़े पैमाने पर उद्योगीकरण

से बड़े कारखाने के मालिक छोटे मजदूरों का शोषण करते हैं।

बड़े पैमाने पर उद्योगीकरण के बारे में गांधीजी ने 29 अगस्त, 1936 के 'हरिजन' में लिखा था कि "बड़े पैमाने औद्योगिकरण गांवों को बेकार बना देगा और उनका तेजी से शोषण होने लगेगा। क्योंकि इस प्रकार की अर्थव्यवस्था में स्पर्द्धा और बड़े-बड़े बाजारों का प्रभाव बढ़ेगा। इस हालत से बचने के लिए हम अपने गावों पर निगाह रखें और उन्हें अपनी जरूरत की चीज पैदा करना सिखाएं। अगर ग्रामोद्योग इस दृष्टि से विकसित किए जाते हैं तो आधुनिक मशीनों और औजारों का थोड़ा बहुत प्रयोग करना भी गलत नहीं होगा। अवश्य ही ध्यान रखना पड़ेगा कि माल शोषण की नजर से बड़े-बड़े बाजारों के लिए न बने।"

इस बारे में गांधीजी ने यह भी लिखा है, "हमें इस बात पर सारी शक्ति केन्द्रित करनी होगी कि गांव स्वावलम्बी बनें और माल अपने उपयोग के लिए ही तैयार करें। अगर ग्रामोद्योग का यह स्वरूप कायम रखा जाए तो ग्रामीणों द्वारा ऐसे आधुनिक यंत्रों और औजारों को काम में लेने के बारे में मुझे कोई ऐतराज न होगा, जिन्हें वे बना सकते हैं और जिनका उपयोग करने की उनकी शक्ति हो। शर्त इतनी ही है कि वे दूसरों के शोषण का साधन न बनें।" यह कहा जा सकता है कि आधुनिकतम औद्योगिक उत्पादनों के मुकाबले में ग्रामोद्योग के उत्पादन कीमतों की दृष्टि से टिक ही नहीं सकते हैं। गांधीजी ने इस बारे में 30 नवम्बर, 1934 के 'हरिजन सेवक' में लिखा है, "संभव है कि शुरू में हमें ग्रामोद्योग के उत्पादन के लिए साधारण भाव से कुछ अधिक देना पड़े और चीजें भी हल्की मिलें पर अगर हम उन चीजों के बनाने वालों के काम में रस लें और यह आग्रह रखें कि वह बढ़िया से बढ़िया चीजें तैयार करें और सिर्फ आग्रह ही नहीं रखें, बल्कि उन लोगों को पूरी मदद भी दें तो गांवों की बनी चीजों में दिन-दिन जरूर तरक्की होती जाएगी।"

गांधीजी ने जिन ग्रामोद्योगों की बात हमारे सामने रखी थी उनका रूप समय के साथ बदल गया है। पर, उन्हें आज भारत में इस प्रकार शुरू करना होगा कि वे टिके रह सकें। ग्रामोद्योग गांधीजी के जीवन की सम्पूर्ण जीवन योजना का एक अंग मात्र था, जिसके आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और आध्यात्मिक पहलू हैं। भारत की अधिक जनसंख्या खेत-खलिहानों, गांवों में बसती है, इसलिए गांधीजी चाहते थे कि उनका जीवन-यापन, अन्न-वस्त्र की समस्या वहीं आस-पास सुलझे जिससे भारत की जनता आत्मनिर्भर हो जाए। गांधीजी ने इसलिए कताई का कार्यक्रम सामने रखा। कताई के साथ बढ़ई, लोहार, रंगरेज, धोबी, दर्जी आदि रोजी पा सकते हैं, क्योंकि इनका परस्पर सम्बन्ध कताई-बुनाई से है।

बापू की यह मान्यता थी कि चरखा कातने से ही देश के लाखों लोगों को रोजगार मिल सकता है। इसके अतिरिक्त किसी भी दूसरे घरेलू धंधे से इतने अधिक ग्रामीणों को काम नहीं मिल सकता। चरखे के काम में बहुत ही कम पूंजी और प्रबन्ध की जरूरत पड़ती है। चरखे को ग्रामोद्योग का एक प्रमुख प्रतीक मानते हुए गांधीजी कहा करते थे, "मैं भोजन के बिना तो रह लूंगा, मगर चरखे के बिना नहीं रह सकता। जब मैं चरखे पर सूत कातता हूँ, उस समय मुझे गरीब की याद आती है।" गांधीजी ने यह भी कहा कि खादी को उसके अन्दर निहित सब बातों के साथ लेना चाहिए। इसका मतलब है पूरी तरह स्वदेशी मनोवृति जीवन की सभी आवश्यकताओं को प्राप्त करने का निश्चय और वह भी ग्रामीणों के श्रम और बुद्धि के द्वारा।

भारत के गांवों में काफी बेकारी है। गांधीजी के कार्यक्रम को चलाएं तो खादी और दूसरे ग्रामोद्योग से गांव की बेकारी घटेगी। वैसे बेकारी और बेरोजगारी को रखते हुए बापू ने एक स्थल पर लिखा, "मैं ऐसा नहीं चाहता कि जो लोग दूसरे उद्योग धंधों में अधिक कमाते हों वे अपने धंधों को छोड़कर इन उद्योगों को अपना लें। मैं कहता हू कि जो लोग इनमें से किसी ग्रामोद्योग को अपना लें और अपनी मामूली सी आमदनी में वृद्धि कर लें।" ग्रामोद्योग, बेरोजगारी और बड़े उद्योगों के सिलसिले में 1934 के 'हरिजन सेवक' में भी बापू ने लिखा था, "दरअसल बात यह है कि आज प्रत्येक मिल सामान्यत: गांवों की जनता के लिए त्रास रूप हो रही है। उनकी रोजी पर ये मायाविनी मिलें छापा मार रहीं हैं। गांवों में बैठकर कम से कम दस मजदूर जितना काम करते हैं उतना ही काम मिल का एक मजदूर करता है। दस आदमियों की रोजी छीनकर मिल में काम करने वाला एक आदमी गांव में जितना कमाता था उससे अधिक कमा रहा है। इस तरह कताई और बुनाई की मिलों ने गांव की जीविका का एक बड़ा भारी साधान उनसे छीन लिया है।

गांधीजी का रचनात्मक कार्यक्रम लोकतांत्रिक आधार पर ठेठ नीचे से काम करता है और खादी, ग्रामोद्योग आदि से गरीबों को सम्पन्न बनाता है। औजार स्वदेशी होंगे और गांववालों को औजार बनाने और उनका उपयोग करने से जो काम मिलेगा उससे गांववालों को आत्मविश्वास और आशा के रूप में भी बड़ा लाभ होगा। संसार की समस्याएं इतनी पेचीदा हैं कि कोई आदमी उनका निपटा नहीं सकता। गांधीजी ने कुछ महत्व की समस्याएं चुन लीं और साथ ही सब विकासशील देशों की आर्थिक कठिनाइयों को भारतीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में सोचा, उनको सुलझाने के लिए गांधी जी की अर्थव्यवस्था मेहनत, सादगी और विकेन्द्रीकरण पर नियोजित है। हल, चरखा, ग्रामोद्योग इसकी बुनियाद है।

गांधीजी की इस विचारधारा को 'गरीबी का अर्थशास्त्र', 'लगोटी का अर्थशास्त्र' तक कह दिया जाता है। पर बारीकी से देखने पर स्वीकार करना पड़ता है कि गांधीजी ने जिस ढंग की अर्थव्यवस्था की कल्पना की वह समाज के लिए एक नवीन आशा का संचार करती है। इसलिए आज ग्रामोद्योग की दृष्टि से क्या-क्या करना संभव है, इस पर विचार करना ही होगा। □

विकलांगों का कल्याण—एक सामाजिक दायित्व

※ महेन्द्र प्रताप सिंह

विकलांगों के लिए यह सुखद अनुभूति का वर्ष है। मानव समाज इन उपेक्षित लोगों के प्रति अपने कर्त्तव्यों को पूर्ण करता है तो यह बड़ी उपलब्धि मानी जाएगी। इनकी समस्याएं एवं उनके समाधान के उपाय खोजना आज के मानव समाज का पवित्र कर्त्तव्य हो जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 1981 को विकलांग वर्ष के रूप में मनाने की घोषणा करके इन लोगों के मन में जीवन के प्रति एक नया उत्साह कायम किया है। आज विश्व समाज में लगभग 40 करोड़ से अधिक विकलांग व्यक्ति है। यहां हमारा विकलांग से आशय जो अपने शरीर का कोई हिस्सा या हिस्से पूरी तरह या आंशिक रूप से सामान्य व्यक्तियों की तरह काम में नहीं ला सकते जैसे—अंधे, बहरे, गूंगे और मानसिक रूप से अस्वस्थ या हाथ पैर काम कम करते हैं या बिल्कुल नहीं करते।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के सर्वेक्षण के अनुसार प्रति वर्ष भारत में 1 लाख शारीरिक रूप से विकलांग 1 लाख नेत्रहीन और 40 हजार मूक बधिर बढ़ते जा रहे हैं। वर्तमान समय में लगभग 2 करोड़ 70 लाख व्यक्ति विकलांग हैं। इस समस्या पर सभी क्षेत्रों में विचार करने की आज आवश्यकता प्रतीत हो रही है। समस्या की गम्भीरता को देखते हुए इसका तत्काल समाधान खोजा जाना चाहिए। आज देश में विकलांग सेवा संस्थाओं की संख्या विकलांगों को देखते हुए नाममात्र की है, जोकि निम्न तालिका से स्पष्ट होती है।

विकलांग सुविधाओं हेतु संस्थाएं

विवरण	बच्चों के स्कूल	कुछ स्कूल एवं अन्य संस्थाएं
मानसिक विकलांग	11,000	116
शारीरिक विकलांग	14,700	140
मूक बधिर	23,300	148
नेत्रहीन	33,000	185

इससे विकलांग सुविधाओं का भारी अभाव दिखाई देता है। 1981 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 68 करोड़ को पार कर गई है। अतः उक्त सुविधाएं पर्याप्त नहीं कही जा सकतीं। आज के गतिशील युग में विकलांगों को एक बोझ समझा जाता है, हमें इस भावना से अलग हट कर सोचना होगा, उन्हें तिरस्कार नहीं बल्कि सहानुभूति एवं सामाजिक प्रेम की आवश्यकता है, उन्हें रोजगार के अवसर एवं सहयोग देकर उनकी प्रतिभा का उपयोग समाज कर सकता है। समाज को उनकी भावनाओं का आदर करना चाहिए, उनके मन से हीन भावना निकाल देनी चाहिए एवं उनमें नई आशा और विश्वास का प्रसार करना चाहिए जिससे उनके मन आत्मविश्वास से भर जाएं कि वे भी समाज के उपयोगी अंग हैं।

विकलांगों के लिए निम्न सुझाव उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं :—

1. विकलांगों की सुविधाओं के लिए एक राष्ट्रीय नीति निर्धारित की जाए, उन्हें शिक्षा, रोजगार के अवसर मिलें एवं नौकरियों में एक निश्चित प्रतिशत में आरक्षण दिया जाए और उन्हें व्यापक पुनर्वास के अवसर उपलब्ध हों।

2. विकलांगता को रोकने के लिए प्रभावपूर्ण कदम उठाए जाएं।

3. विकलांगों के सम्बन्ध में एक व्यापक सर्वेक्षण करके तथ्यों का संग्रह किया जाए ताकि योजनाओं में उनका उपयोग किया जा सके।

4. विकलांग बच्चों को सरकार छात्रवृत्ति प्रदान करे ताकि अपने पैरों पर खड़े होने के लिए प्रयास कर सकें। यदि विकलांगों को प्रारम्भ से ही प्रोत्साहन दिया जाए तो वे अपनी शारीरिक कमी पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। यदि समाज घृणा व उपेक्षा का व्यवहार करेगा तो वे दर-दर की ठोकरें खाते फिरेंगे, जोकि मानवता के लिए कलंक की बात होगी।

सरकारी संस्थाओं में विकलांगों के लिए तीन प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई है जोकि एक सराहनीय प्रयास कहा जा सकता है। इसी के साथ आयु सीमा में भी 5 वर्ष की शिथिलता प्रदान की गई है। प्रत्येक विकलांग व्यक्ति जोकि उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहता है उसे 40 प्रतिशत अंक पाने पर सरकार छात्रवृत्ति प्रदान करती है। रेलों में उन्हें किराया कम देना होता है। कुछ राज्य सरकारें भी बसों में इस तरह की रियायत देती हैं।

मध्य प्रदेश में विकलांग

अन्य राज्यों की तरह विकलांग लोगों की संख्या मध्य प्रदेश में एक लाख से भी अधिक है जोकि कुल जन संख्या का 0.2 प्रतिशत है जबकि सम्पूर्ण भारत में यह 4 प्रतिशत है। इसके बाद भी विकलांग सेवा का लाभ प्राप्त करने वाले केवल 1425 व्यक्ति ही हैं एवं संस्थाएं जोकि उक्त कार्य में लगी हैं केवल 28 ही हैं। अतः प्रदेश की विशालता को एवं विकलांगों की संख्या को देखते हुए यह संख्या न्यूनतम समझी जा सकती है। फिर भी उन्हें विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षित करने का प्रयास सरकारी एवं सेवा संस्थाओं द्वारा किया जाता है जोकि प्राथमिक शाला में 25 रुपये, माध्यमिक शाला में 30 रुपये व उच्चतर माध्यमिक शाला में 35 रुपये प्रति माह है। इसके अतिरिक्त, उन्हें निःशुल्क श्रवण यंत्र, बैसाखी, चश्मे आदि प्रदान किए जाते हैं।

आज समाज के प्रत्येक वर्ग का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह इस वर्ग के प्रति सहयोगात्मक रूप अपनाए जिससे उन्हें अपना जीवन बोझ न लगे एवं वे प्रकृति के इस कोप को वहन कर सकें। ☐

महेन्द्र प्रताप सिंह (शोध छात्र),
टैगोर छात्रावास,
सागर विश्वविद्यालय, सागर

खेतिहर मजदूरों की बेरोजगारी दूर करने के नवीन प्रयास

जितेन्द्र नाथ मल्होत्रा

भारत में जनसंख्या वृद्धि इतनी तेजी से हो रही है, कि रोजगार बढ़ाने के नवीन अवसर अदृश्य व प्रभावहीन रह जाते हैं। सरकार द्वारा कृषि-श्रमिक सम्बन्धी एक जांच के अनुसार 1950-51 में ग्रामीण बेरोजगारों की संख्या 28 लाख थी। वर्ष 1956 में नियोजन आयोग के आंकड़ों के अनुसार भी 53 लाख बेरोजगारों में से 28 लाख व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में से थे। यह बेरोजगारी बढ़ती गई एवं चौथी योजना के अन्त तक 2.29 करोड़ लोगों को रोजगार की तलाश थी। उपरोक्त पूर्ण बेरोजगारी के अतिरिक्त कृषि क्षेत्रों में अल्पकालीन मौसमी बेरोजगारी का भी उदय होता है। श्री जक के अनुसार बंगाल में पटसन की खेती करने वाले श्रमिक वर्ष में 9 मास और चावल की खेती करने वाले श्रमिक 7½ मास खाली बैठे रहते हैं। डा० राधाकमल मुकर्जी के अनुसार उत्तर प्रदेश के सघन कृषि क्षेत्रों में भी किसान को साल में केवल 200 दिन ही काम मिलता है। बेरोजगारी का एक अन्य रूप छिपी बेरोजगारी है जो कृषकों में पाई जाती है। भारत में भूमि पर जनसंख्या का भार अधिक है, 70 प्रतिशत तथा भूमि पर निर्भर कई ऐसे लोग काम में लगे हुए दिखाई देते हैं, किन्तु कृषि उत्पादन में उनका योग-दान नगण्य होता है। श्री दत्ता ने वर्ष 1951 में ऐसे अतिरिक्त श्रमिकों की संख्या 1.94 करोड़ व श्री एम० एल० गुप्ता के अनुसार 1954 में 1.56 करोड़ आंकी गई थी।

उपरोक्त मौसमी एवं छिपी बेरोज-गारी का सही मापन मनुष्य-दिन के रूप में किया जा सकता है। यदि एक मनुष्य लगभग 8 घंटे कार्यरहित रहे तो उसे एक मनुष्य-दिन बेरोजगारी की संख्या दी जा सकती है। भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों में अनुमानतः 500 करोड़ दिन प्रतिवर्ष की बेरोजगारी व्याप्त है। उपरोक्त आंकड़ों में महिला श्रमिकों की अपार श्रम-शक्ति सम्मिलित नहीं है। इस व्याप्त बेरोजगारी से असन्तोष, अनुत्पादकता, कानून और व्यवस्था में शिथिलता, नगर प्रवास एवं अनेक सामाजिक समस्याओं के उत्पन्न होने के साथ-साथ गरीबी जैसा भयंकर सामाजिक रोग बढ़ता है; अतः पुरातन काल से ही बेरोजगारी कम करने के लिए प्रयास किए जाते रहे हैं।

ब्रिटिश काल में सूखा, बाढ़ व अकाल से प्रभावित क्षेत्रों में टैस्ट वर्क्स चलाए जाते थे जिन्हें चलाने का दायित्व जिला प्रशासन का रहता था व स्वरूप राहत कार्यों जैसा था। यदि टैस्ट वर्क स्थान पर मजदूर न आए तो यह समझा जाता था कि अब भुखमरी जैसी स्थिति नहीं है। क्योंकि मजदूरी की दरें सामान्य प्रचलित दरों से कम रखी जाती थीं।

स्वतन्त्र भारत में योजनाओं के कार्यान्वियन में फलस्वरूप 1951-65 के बीच विकास व निर्माण कार्यों के कारण रोजगार क्षेत्र में अपार वृद्धि हुई व 1966-72 की अवधि में हरित क्रांति के आवेग से आशा से अधिक श्रमिकों को कृषि क्षेत्र से रोजगार मिला। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि प्रति एकड़ असिंचित क्षेत्र में 64 मानव दिवस का श्रम व सिंचित होने पर 80 मानव दिवस का श्रम सृजित होता है। इसी प्रकार एक हेक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई निर्माण पूर्ण होने पर 1-2 जन वर्ष रोजगार का सृजन हो जाता है। एक हजार हेक्टेयर सिंचित क्षेत्र की सिंचाई व्यवस्था बनाए रखने के लिए 10 मानव दिवस प्रति-वर्ष की आवश्यकता है तथा कृषि सघनता विधियों के अपनाने के फलस्वरूप 45 मानव दिवस अतिरिक्त रोजगार प्रति हेक्टेयर उपजता है। अतः स्पष्ट है कि कृषि की उन्नति से कुछ श्रम शक्ति को खेती में ही खपाया जा सकता है। किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाली 80 प्रतिशत आबादी को काम उपलब्ध करा देना आसान नहीं है।

वर्ष 1971-72 में ग्रामीण रोजगार के क्षेत्र में त्वरित रोजगार योजना चालू की गई है गैर योजना कार्यक्रम के रूप में चलाया था और 50 करोड़ रुपये की धनराशि स्वीकृत की थी। इसी योजना के अन्तर्गत प्रत्येक जनपद के 1000 व्यक्तियों को वर्ष भर का रोजगार

प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया था। 1971-72 में ही इसमें से 31.25 करोड़ रुपये व्यय कर लिए गए थे व 80 करोड़ मनुष्य-दिन के बराबर रोजगार सृजित हुआ था। 1972-73 में 52 करोड़ रुपये व्यय कर दिए गए और 130 करोड़ मनुष्य-दिन रोजगार का सृजन हुआ। 1974-75 के उपरांत विभिन्न क्षेत्रीय योजनाओं के समावेश के कारण इस योजना का लोप हो गया था किन्तु सामुदायिक विकास एजेन्सी एवं प्रशासन को इस प्रकार के काम कराने का पर्याप्त अनुभव हो गया एवं सार्वजनिक निर्माण विभाग एवं सिंचाई विभाग जैसे तकनीकी विभागों के मिट्टी का कार्य सम्पन्न कराने के एकाधिकार का अन्त हो गया। त्वरित योजनाओं में कुछ पक्के निर्माण कार्य जैसे पुलिया साइफन, डामर डालना या बांधों का पक्का करने का कार्य भी किया गया था किन्तु यह ध्यान रखा गया था कि कुल व्यय किए गए धन का 60 प्रतिशत श्रम का भाग हो व शेष 40 प्रतिशत धन ही निर्माण सामग्री पर व्यय किया जाए।

वर्ष 1977 में जनता सरकार के कार्यकाल में "श्रम के बदले खाद्यान्न" योजना चलाई गई जिसके निम्नलिखित उद्देश्य थे :—

क—ग्रामीण क्षेत्रों के बेरोजगार लोगों को रोजगार प्रदान करना।

ख—सामुदायिक महत्व की स्थायी परिसम्पत्तियां स्थापित करना।

ग—अतिरिक्त खाद्यान्न का मानवीय संसाधनों के सृजन के लिए उपयोग।

स्थानीय रूप से योजनाओं को बनाने स्वीकृत कराने व विकास खंड स्तर पर उसे कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व क्षेत्र विकास अधिकारी का रखा गया। मजदूरी के रूप में 5 किलो गेहूं दिया जाता था व प्रत्येक मजदूर जुट से प्रति दिन 100 घनफुट मिट्टी का कार्य सम्पन्न करने की अपेक्षा की जाती थी। 20 व्यक्तियों की टोली पर एक टोली नायक दरेसी कराने, कार्य का मापन व हाजिरी लेने हेतु उत्तरदायी था। टोली के साप्ताहिक मिट्टी के काम में कमी आने पर उसी अनुपात में मजदूरी कम कर दी जाती थी। प्रथम वर्ष में गेहूं 105 रुपये व द्वितीय वर्ष 120 रुपये प्रति क्विंटल की दर से लगाया था। गेहूं के लाने ले जाने व सर्वेक्षण इत्यादि के लिए अलग से धन का प्रावधान कर दिया गया था। योजनाओं का परीक्षण एवं स्वीकृति जिला अधिकारी की अध्यक्षता में गठित एक समिति द्वारा किया जाता था जिसमें समस्त विधायक, लोक सभा व विधान सभाओं के सदस्य एवं जिला स्तर के अधिकारी होते थे। अतिरिक्त जिला अधिकारी (विकास), जिला विकास अधिकारी इसके संयोजक थे। इस समिति को स्थानीय रूप से मजदूरी की दरें निश्चित करने का अधिकार था। खाद्यान्न योजना के अन्तर्गत निम्न प्रकार के कार्य सम्पन्न कराए गए। क्षेत्र के समस्त विभागों को इस योजना के अन्तर्गत धन आवंटित किया जा सकता था एवं केवल विकास क्षेत्रों की सीमा तक ही यह योजना सीमित नहीं रही।

क—कच्चे सम्पर्क मार्गों का निर्माण।

ख—तालाबों को गहरा व साफ रखना।

ग—जल निकास नाले खोदना।

घ—बाढ़ से बचाव हेतु बांध।

ड़—वृक्षारोपण।

च—गूलों का विस्तार व सफाई।

छ—खड़जा लगाना।

ज—सार्वजनिक कार्यों की मरम्मत व रख-रखाव की मजदूरी पर व्यय।

झ—निर्मित सम्पर्क मार्गों की पुलिया का निर्माण।

वर्ष 1979-80 में भयंकर सूखे से संतप्त उत्तर प्रदेश को इस योजना से बड़ी राहत मिली थी। भौतिक उपलब्धियों के रूप में यदि आंका जाए तो श्रम के बदले अन्न कार्यक्रम से निम्नलिखित उपलब्धियां उत्तर प्रदेश में ही दी गई हैं :—

1—सम्पर्क मार्ग 34296 कि० मी०।

2—गूलों का निर्माण 4500 कि० मी०।

3—तालाबों का सुधार 4120 संख्या।

4—जल निष्कासन नालियां 314 योजनाएं।

4—बांध (संख्या) 403।

6—अन्य 4150।

इसके अतिरिक्त 6000 योजनाओं पर कार्य चल रहा है। वस्तुतः श्रम के बदले खाद्यान्न योजना अन्न से परिपूर्ण राजकीय भण्डारों पर आधारित थी। चूंकि भंडारों में अन्न की बहुलता की स्थिति बदल गई है। और कोटि-कोटि साधन-हीन निर्धन ग्रामवासियों को रोजगार प्रदान करना स्थाई महत्व का कार्य है इसलिए शासन ने ग्रामीण रोजगार को छठी पंचवर्षीय योजना के अंगरूप में स्वीकार कर लिया है। इस प्रकार श्रम के बदले खाद्यान्न योजना नवम्बर 1980 में समाप्त हो गई है। और उसका स्थान राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम ने ले लिया है।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना के लिए प्रदेश को भारत सरकार से 74500 टन खाद्यान्न तथा 4,17,40,000 रुपये मजदूरी के भुगतान हेतु प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त वर्ष 1980-81 के लिए पुराने कार्यों को पूर्ण करने हेतु 13 करोड़ 4 लाख रुपये की धनराशि भी भारत सरकार से प्राप्त हुई है। छठी योजना में 1500 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है जिससे 150 करोड़ मानव दिवस के श्रम का सृजन होगा। उत्तर प्रदेश को उपरोक्त धन में 225 करोड़ रुपये मिलने की आशा है।

राष्ट्रीय ग्रामीण योजना का स्वरूप व्यापक होगा और इसके अन्तर्गत ग्रामीण सड़कों आदि के अतिरिक्त ऐसे कार्य भी लिए जाएंगे जिनसे ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक सुविधाएं तथा संसाधन सृजित व उपलब्ध हो सकें; उदाहरणार्थ :—

1—मध्यम और छोटे सिंचाई कार्य।

2—बाढ़ बचाव एवं जल निकास सम्बन्धी कार्य।

3—भूमि और जल संरक्षण, भूमि सुधार।

4—वनीकरण एवं वृक्षारोपण।

5—समतलीकरण मूल निर्माण।

[शेष पृष्ठ 21 पर]

सौर-ऊर्जा और मानव जीवन

शुकदेव प्रसाद

जो जरूरत से ज्यादा धन जमा करता है
वह चोर है और दण्ड पाने योग्य है।

श्रीमद्भागवत

सूर्य धरती के लिए वरदान स्वरूप है क्योंकि यह ऊर्जा का अक्षय भंडार है। आदिम सभ्यता का अतीत इसी पर आधारित रहा है, वर्तमान में सूर्य हमारा जीवनदाता है और भविष्य में भी सूर्य ही हमारा आश्रयदाता होगा। ऊर्जा को जीवन का पर्याय कहा जाना चाहिए। सच तो यह है कि बिना ऊर्जा के जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

आदि संस्कृतियाँ और सूर्योपासना

हमारा सूर्य इस सौर परिवार का केन्द्र है और हम जिस ग्रह यानी धरती पर रहते हैं, उसके सभी जीवधारियों के लिए ऊर्जा का आदि स्रोत सूर्य रहा है। आदि मानव ने सूर्य के उदय और अस्त होने के समय के अनुसार दिन और रात की अवधारणा विकसित की। सूर्य के उगने के साथ ही उसने कार्यारम्भ एवं उसके अस्त होने के साथ ही विश्राम करने की परम्परा बनाई। सूर्य द्वारा प्रदत्त ऊर्जा से प्रभावित होकर आदि मानव ने उसकी उपासना तक प्रारम्भ कर दी। उसे देवता स्वरूप माना। भारत ही नहीं, दुनिया की और सभ्यताओं में भी सूर्य उपासना की प्रथा रही है। वेदों में सूर्य को स्थावर और जंगम की आत्मा माना गया है। यथा—"सूर्य आत्मा जगत स्तस्थुषश्च।" (ऋक् 1/115/1) अर्थात् सूर्य स्थावर और जंगम की आत्मा है। उपनिषदों में सूर्य को प्राण कहा गया है—आदित्यो ह्व प्राणः (प्रश्न उप० 1/5) इसे सविता यानी जीवनदाता नाम दिया गया है। इस ग्रह की उत्पत्ति एवं जीवनोद्भव का कारण सूर्य ही है, अतः सविता नाम अत्यंत सार्थक है। सबका पालक होने के नाते इसे आदित्य भी कहा गया है। वस्तुतः सूर्य इस जगत का पोषक है, पूरक है और भविष्य में भी इसी की ओर बिना मोल की प्रदूषण रहित ऊर्जा के लिए हमें झोली फैलानी होगी। पृथ्वी पर हमें ऊर्जा के जितने रूप ज्ञात हैं, उसमें नाभिकीय एवं भू-उष्मा को छोड़ कर सभी ही सूर्य से जनित हैं चाहे वे फॉसिल हो, ईंधन हो, अर्थात् कोयला, तेल या प्राकृतिक गैसों अथवा ज्वार-भाटा ऊर्जा, पवन ऊर्जा अथवा जल विद्युत सूर्य की ही गरमी से वायु में तरंगें उत्पन्न होती हैं जो उसे ऊर्जा प्रदान करती हैं। नदियों, झीलों, जलाशयों, सागरों का पानी वाष्प बनकर उड़ता है, जो वर्षा के रूप में पुनः उन्हीं स्रोतों को प्राप्त होता है। ज्वार भाटा ऊर्जा भी सूर्य से उद्भूत है क्योंकि जलवायु और मौसम सूर्य से प्रभावित होते हैं जिसके फलस्वरूप ज्वार-भाटा को ऊर्जा मिलती है। ऊर्जा की प्राकृतिक संपदाएं आज से हजारों-लाखों वर्ष पूर्व सौर ऊर्जा के संचय से ही निर्मित हैं, इस प्रकार देखें तो निश्चय ही सूर्य को इस धरती का पालक, पोषक कहना पूर्ण रूप से उचित प्रतीत होता है।

इतिहासकार अलबेरूनी तथा विदेशी यात्री ह्वेनसांग ने मुल्तान के विशाल सूर्य मन्दिर का उल्लेख किया है। कोणार्क का सूर्य मन्दिर आज भी अपनी स्थापत्य कला के लिए विख्यात है। जयपुर की गलता पहाड़ी पर सूर्य मन्दिर है, अन्य देशों में भी सूर्योपासना का चलन था। भारत ही नहीं, अन्य संस्कृतियां भी सूर्य की उपासिका थीं। रोमन संस्कृति में 'अपोलो' सूर्य देवता है। उनके यहां अपोलो को सात सफेद घोड़ों के रथ पर यात्रा करते चित्रित किया गया है। यूनानियों के सूर्य देवता का नाम 'हीलियास' है। मिस्र के लोग सूर्य को 'रे' नाम से पुकारते हैं तो बेबीलोन के लोग 'शमश' नाम से सूर्य को सम्बोधित करते रहे हैं।

सूर्य हमें आदिकाल से प्रभावित करता रहा है और भौतिकीय अथवा अभौतिकीय (मेटाफिजिकल) रूप में मानव उसकी सत्ता को स्वीकारता आया है। उसकी अर्चना करता आया है, जो अनौचित्य कतई नहीं है।

आदि मानव सूर्य का उपयोग कर जमीन में किसी लट्ठ या लकड़ी को गाड़कर उसकी परछाईं को देखकर समय का अनुमान करता था, इस प्रकार उसने सूर्य घड़ी (सन-डायल) बनाई। पहले ही नहीं, आज भी कपड़े सुखाने, फसलों को पकाने में सूर्य का उपयोग किया जाता है।

औद्योगिक संस्कृति बनाम ऊर्जा का अकाल

बढ़ते औद्योगिकीकरण ने ऊर्जा के प्राकृतिक भण्डारों को समाप्त प्राय : कर दिया है । ज्यों-ज्यों आबादी बढ़ती जाएगी, उद्योगों की रफ्तार भी बढ़ती जाएगी जो विकासशील राष्ट्र हैं, वे विकसित राष्ट्रों की कोटि में आने के लिए औद्योगिक संस्कृति को अपनाने की प्रति-स्पर्धा में होड़ लगा रहे हैं । वस्तुत: आज उद्योग हमारी समृद्धि के मापदण्ड बन गए हैं । एक उदाहरण ही देना पर्याप्त होगा—संयुक्त राज्य अमेरिका, जिसकी जनसंख्या संपूर्ण विश्व की केवल सात प्रतिशत है, वह संपूर्ण ऊर्जा का 32 प्रतिशत यानी एक तिहाई उपयोग करता है और वर्तमान जनसंख्या का 20 प्रति-शत का भू-भाग यानी भारत, संपूर्ण संसार में कुल प्राप्त ऊर्जा का मात्र 1 प्रतिशत उपयोग करता है । इस दृष्टि से प्रत्येक अमेरिकी नागरिक एक भारतीय की तुलना में 40 गुना अधिक ऊर्जा व्यय करता है । स्वाभाविक है, ये अति औद्योगिक संस्कृति जो मात्र उपभोगवादी है, प्रकृति को छिन्न-भिन्न करने के साथ ही साथ उसमें गैसीय असंतुलन भी उत्पन्न कर रही है, हमरी आने वाली पीढ़ियों के लिए जीवन-मरण का प्रश्न बनकर उभरेगी । इसमें कमी आए, फिलहाल ऐसा नहीं लगता । आज से 20-30 लाख वर्ष पूर्व मानव का इस धरा पर प्रदुर्भाव हुआ और 1830 तक दुनिया की कुल आबादी सौ करोड़ थी जो अगले सौ वर्षों में अर्थात् 1930 तक दुगुनी हो गयी । तात्पर्य यह है कि जितनी जन-संख्या लाखों सालों में उत्पन्न हुई, वह इधर के मात्र सौ वर्षों में पैदा हो गई । आबादी की बढ़ती रफ्तार ने आगे और गति पकड़ी । अगली एक सौ करोड़ आबादी केवल 30 वर्षों में ही विकसित हो गई । इस प्रकार 1960 तक तीन सौ करोड़ नर-नारी इस धरती पर हो गए और मात्र 15 वर्षों में यानी 1975 तक यह बढ़कर 4 सौ करोड़ हो गई। अनुमान है कि सन् 2000 तक जनसंख्या बढ़कर लगभग सात सौ करोड़ हो जाएगी, यह आबादी हमारे सामाजिक आर्थिक मूल्यों को भी प्रभावित करेगी । ज्ञातव्य है कि पिछले अरब-इसराइल युद्ध से उत्पन्न तेल संकट ने विश्व की अर्थ-व्यवस्था को काफी प्रभावित किया, खासकर विकासशील देशों को । तेल, कोयले या प्राकृतिक गैसों के भंडार अतिसीमित हैं अत: इनको खर्च करने में हमें किफायत बरतनी होगी क्योंकि इनका नवीनीकरण नहीं हो सकता और यह प्रदूषण भी उत्पन्न करती है। अब हमें ऊर्जा के अन्य वैकल्पिक स्रोतों की ओर मुखातिब होना पड़ेगा जो ऊर्जा के पुनर्नवल रूप कहे जा सकें । ज्वार भाटीय और पवन ऊर्जा तो अति सीमित हैं । नाभिकीय ऊर्जा इन परम्परागत ऊर्जाओं का पूरक तो है मगर उसकी तकनीक काफी जटिल है साथ ही नाभिकीय प्रक्रियाओं में उत्पन्न उच्छिष्ट पदार्थों के असुरक्षित निपटान की समस्या भी जटिल है । नाभिकीय शक्ति राजनीतिक बिस्तर पर विवाद का विषय रही है । भारत जैसे देश में यूरेनियम के भंडार नहीं हैं, हमारे पास पर्याप्त थोरियम है लेकिन उसके लिए अभी तीव्र प्रजनन रिएक्टर (फास्ट ब्रीडर रिएक्टर) की तकनीक विकसित होनी है ।

एकमात्र विकल्प सूर्य

अन्त में हमें मात्र सूर्य ही ऊर्जा विकल्प के रूप में ठोस आधार प्रदान करता है । पिछले 50 लाख वर्षों से सूर्य स्वयं जलता हुआ हमें अविरल गति से ऊर्जा प्रदान करता आ रहा है और अभी 50 लाख वर्षों तक सूर्य प्रज्वलित रहेगा, ऐसी आशा है । सूर्य ऊर्जा में निहित शक्ति का अनुमान इसी बात से लगा सकते हैं कि सूर्य द्वारा प्रदत्त 20 मिनट की ऊर्जा से वर्ष भर के लिए सारी धरती की ऊर्जा आवश्यकताएं पूरी हो सकती हैं । वस्तुत: सूर्य में हाइड्रोजन के परमाणुओं के आपसी टकराव से ही हीलियम नाभिक बनता है । और ऊर्जा विमुक्त होती है । नाभिकीय संलयन (फ्यूजन) की क्रिया सूर्य में पिछले कई खरब वर्षों से चल रही है और यह सौर ऊर्जा धरती के अधिकांश भू-भागों में कमोबेश हर जगह उपलब्ध रहती है । हां, यह बदली छायी रहने पर या रात में नहीं उपलब्ध हो सकती, लेकिन यह कोई समस्या नहीं । दिन में पर्याप्त प्रकाश रहने पर सौर बैटरियों में उसे संग्रहीत किया जा सकता है और सूर्य की उपस्थिति में इस संग्रहीत ऊर्जा का उपयोग हो सकता है । सूर्य धरती के लिए वरदान है । यह ऊर्जा का अक्षय भंडार है, इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि स्वच्छ एवं संदूषण रहित है।

व्यापक संभावनाएं

भारत ही नहीं दुनिया में अनुसंधान एवं विकास (रिसर्च एण्ड डिवलपमेंट) कार्य-क्रमों के अन्तर्गत सौर अनुसंधान जोरों पर चल रहे हैं और अब सौर ऊर्जा से चालित सौर चूल्हों (सोलर कुकर) गरम करने का सौर उपकरण यानी सौर जल-उष्मक, समुद्री खारे पानी को शुद्ध करने यानी पीने योग्य बनाने के लिए उपकरणों का विकास कर लिया गया है । भारत में सौर ऊर्जा सम्बन्धी अनुसंधान कार्य दिल्ली स्थित राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला ने 1950 में प्रारम्भ किया । दिल्ली के फाइव स्टार होटल मौर्य में सौर ऊर्जा की मदद से गर्म पानी की आवश्यकता पूरी की जाती है तथा सर्दियों में वहां के तैराकी ताल (स्विमिंग पूल) को गरम किया जाता है । उल्लेखनीय है कि इसकी पूर्ण अभिकल्पना राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला ने की थी । अभी हाल में मद्रास के भारतीय तकनीकी संस्थान (आई० आई० टी०) में भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स लि० और फेडरल जर्मनी के सहयोग से 10 किलोवाट क्षमता की सौर ऊर्जा यूनिट स्थापित की गई है। सौभाग्य से हमारा देश संसार के उन भू-भागों में है जिनके पास विपुल मात्रा में सौर ऊर्जा है। राष्ट्रीय प्रयोगशाला के अतिरिक्त भारत मे केन्द्रीय नमक तथा समुद्री रसायन अनुसंधान संस्थान भावनगर; केन्द्रीय भवन निर्माण अनुसंधान संस्थान रुड़की; केन्द्रीय निर्जल अनुसंधान जोधपुर; भारतीय तकनीकी संस्थान मद्रास; भारतीय तकनीकी संस्थान नई दिल्ली; बिरला-विज्ञान तथा तकनीकी संस्थान, पिलानी; मोतीलाल नेहरू इंजीनियरिंग कालेज इलाहाबाद; रुड़की विश्वविद्यालय;

स्नातकोत्तर पर्यावरण अध्ययन केन्द्र पांडिचेरी आदि संस्थाओं में सौर अनुसंधान कार्यक्रम चल रहे हैं ।

वस्तुतः सौर ऊर्जा का विकास अपने आप में अधुनातन एवं उन्नत शिल्प विज्ञान है जिसमें पर्याप्त परिष्करण की नितांत आवश्यकता है । अभी सौर ऊर्जा से संचालित ये उपकरण इतने मंहगे हैं कि वे कदापि व्यावहारिक नहीं कहे जा सकते । व्यापारिक स्तर पर इनका उत्पादन अभी संभव नहीं ।

दैनिक जीवन के अन्य आयामों में सौर ऊर्जा का उपयोग सौर-बैटरियों की मदद से किया जा सकता है । सौर सेल की मदद से सूर्य ताप को सीधे विद्युत में परिवर्तित किया जा सकता है । यदि घरों की छतों पर ऐसे संयंत्र लगा दिए जाएं तो घर के कामों पानी, भोजन पकाने, पानी गरम करने, कपड़े सुखाने, कमरों को गरम रखने तथा प्रशीतकों की मदद से ठंडा भी करने में इसका उपयोग किया जा सकता है । सौर बैटरियों की बढ़ती लोकप्रियता के कारण बहुत सी फर्में इनका उत्पादन करने लगी हैं । सौर सेलों में कैडमियम की चादर बिछी होती है, जो सूर्य किरणों को अवशोषित कर इलेक्ट्रानों का उत्सर्जन प्रारम्भ कर देती है । यदि सौर बैटरियों की पट्टियां तार से जोड़ दी जाएं तो हमें विद्युत स्रोत तुरन्त उपलब्ध हो सकता है जिनसे हम रेडियो चला सकते हैं, मोटर चला सकते हैं या अन्य दैनिक कार्यों में इस बिजली का उपयोग किया जा सकता है । सिलीकन की सोलर बैटरी काफी मंहगी पड़ती है, अब कैडमियम सल्फाइड, गैलियम आर्सेनाइड का उपयोग कर सस्ती सौर बैटरियां बनाई जा रही हैं ।

सौर ऊर्जा : नए आयाम

इधर जितने अंतरिक्ष उपग्रह छोड़े गए हैं, सभी सौर संचालित हैं । अब तक की सभी मानव रहित अन्तरिक्ष उड़ानों में विद्युत उत्पन्न करने के लिए फोटो वोल्टेक प्रणालियां प्रयुक्त की गई हैं । लेकिन अंतरिक्षीय सौर प्रणाली धरती के लिए अपेक्षाकृत सैंकड़ों गुनी मंहगी है । हालांकि सौर सेलों की कीमत कम करने तथा कार्य क्षमता बढ़ाने की दिशा में अनुसंधान हो रहे हैं ।

अमेरिकी वैज्ञानिक डा० पी० ई० ग्लेजर ने प्रस्ताव रखा था कि एक उपग्रह पृथ्वी की कक्षा में ऊंचाई पर स्थापित कर दिया जाए जो चौबीसों घंटे सौर ऊर्जा प्राप्त करता रहेगा और उसे सूक्ष्म तरंगों (माइक्रो वेव्स) में बदल कर धरती के स्टेशनों को प्रेषित करता रहेगा तो बदली आदि की समस्याएं समाप्त हो सकती हैं और इस विद्युत से दूर-दराज के बिखरे पड़े गांवों में खुशहाली और अमन-चैन की जिंदगी बख्शी जा सकती है । इन पर मौसमी दशाओं का हानिकारक प्रभाव कतई नहीं पड़ेगा । इस ऊर्जा के प्रेषण में इसका कोई भी अंश विनष्ट नहीं होता । ऐसा प्रस्ताव भी किया जा रहा है कि रेगिस्तानी इलाकों में सौर भट्ठियां स्थापित की जाएं । ऐसा करके उन्हें हरियाली में तब्दील किया जा सकेगा क्योंकि वहां पर्याप्त धूप रहती है ।

भारत ही नहीं, विदेशों में भी सौर ऊर्जा में निहित व्यापक संभावनाओं को देखते हुए अब सौर भट्ठियां (सोलर स्टिल्स्) स्थापित की जा रही हैं जहां खारे पानी को पीने लायक बनाया जा रहा है । इनमें सौर ऊर्जा ईंधन के रूप में प्रयुक्त होती है । अभी हाल में ही सौर ऊर्जा से एक हवाई जहाज के सफल संचालन का परीक्षण संभव हुआ है ।

सूर्य देवो भव

सूर्य की उपयोगिता को देखते हुए उसे 'सूर्य देवो भव' अर्थात् सूर्य देव स्वरूप है, कहना एकदम उपयुक्त है । शायद इसीलिए वैदिक ऋषि कल्पना करता है : नः सूर्यस्य संदृशे मा युयोथाः (ऋक् 2/33/1) अर्थात् सूर्य के प्रकाश से हमारा कभी वियोग न हो । □

खेतिहर मजदूरों की बेरोजगारी . . . . . [पृष्ठ 18 का शेषांश]

6—ग्रामीण सड़कों व वनमार्गों का विकास ।

7—निर्माण कार्यों का पूर्ण करना ।

8—ग्राम्य सरोवरों का विकास व निर्माण ।

इस योजना के अन्तर्गत मजदूरी का 3/5 भाग नकद धन तथा 2/5 भाग खाद्यान्न के रूप में दिया जाएगा । जिन क्षेत्रों में चावल का प्रयोग अधिक होता है वहां दो किलोग्राम चावल तथा अन्य क्षत्रों में एक किलोग्राम गेहूं व एक किलोग्राम चावल प्रतिदिन प्रति मजदूर देने की व्यवथा की गई है । शेष मजदूरी का नकद भुगतान होगा । खाद्यान्न योजना की भांति ठेकेदारों का माध्यम इस कार्यक्रम में भी वर्जित है ।

प्रदेश स्तर पर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना के लिए निदेशक पंचायत राज को विभागाध्यक्ष नियुक्त किया गया है । जिला स्तर पर जिला अधिकारी की अध्यक्षता में एक संचालन समिति होगी जिसमें विधान सभा, विधान परिषद तथा लोक सभा के सदस्य सम्बन्धित जिला स्तरीय विभागीय अधिकारी खाद्य निगम के वरिष्ठतम अधिकारी तथा जिला परिषद के प्रतिनिधि इस कमेटी के सदस्य होंगे । समाजसेवी संस्था का एक प्रतिनिधि नामांकित किया जा सकता है । यह समिति प्रति माह कम से कम एक बैठक अवश्य करेगी तथा जनपद में कराए जाने वाले कार्यों का चयन तथा संसाधनों का आबंटन किया करेगी । प्रारम्भ में योजना का आकलन प्राविधिक अधिकारी से बनवाना होगा व अन्य कार्य-प्रणाली खाद्यान्न योजना की भांति प्रचलित रहेगी ।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत ऐसे क्षेत्रों को प्राथमिकता दी जाएगी जिन में पिछड़े वर्गों को सुविधाएं मिल सकें । ऐसा अनुमान है कि प्रतिवर्ष 500 करोड़ मनुष्य–दिन की बेरोजगारी के विरुद्ध इस योजना से 30 करोड़ मनुष्य–दिन प्रति वर्ष तक की बेरोजगारी कम की जा सकेगी । □

नए बजट में कमजोर वर्गों को राहत

कृष्णकान्त

वित्त मंत्री श्री आर० वेंकटरामन ने 1981-82 के आम बजट में समाज के सभी वर्गों को कुछ न कुछ राहत पहुंचाने की कोशिश की है। स्वाधीन भारत के इतिहास में संभवतः यह पहला मौका है जब बजट के बाद चीजों की कीमतों में कोई वृद्धि नहीं हुई। आम आदमी के दिमाग में बजट की यह तस्वीर होती है कि इसके पेश होते ही उसकी मुसीबतें और बढ़ेंगी और रोजमर्रा के इस्तेमाल की चीजें मंहगी हो जाएंगी। यकीनन इस बजट से ऐसा कुछ नहीं हुआ और मंहगाई के बोझ से पहले से ही संत्रस्त प्रायः सभी वर्गों के लोगों ने राहत की सांस ली।

इस बजट से यह बात भी साफ हो गई है कि प्रधानमंत्री, श्रीमती इंदिरा गांधी और उनकी सरकार द्वारा ग्रामीण और निर्धन लोगों, किसान और मजदूरों, अनुसूचित जातियों और जनजातियों और अन्य कमजोर वर्गों का हिमायती होने का दावा महज सस्ती लोकप्रियता पाने की चाल नहीं थी बल्कि उन्हें जाहिरा तौर पर इन वर्गों के साथ हमदर्दी है और वे इनके भले के लिए हर कुछ करने को कृतसंकल्प हैं।

बजट किसी देश के सुनियोजित विकास का साल दर साल पेश किया जाने वाला लेखा-जोखा होता है। पिछले वर्ष जब श्रीमती गांधी की सरकार ने सत्ता संभाली थी तो उसे एक चरमराती हुई अर्थ-व्यवस्था विरासत में मिली थी। कुल राष्ट्रीय उत्पादन में साढ़े चार प्रतिशत की गिरावट आ गई थी और कीमत 21 प्रतिशत से भी ज्यादा बढ़ गई थीं। विकास का आधारभूत ढांचा लड़खड़ा गया था और कोयला, बिजली तथा रेल के क्षेत्र में भयंकर संकट की स्थिति थी। इस हालत में नई सरकार का सबसे पहला काम अर्थ-व्यवस्था को एक बार फिर स्थिरता और प्रगति के मार्ग पर लाकर खड़ा करना था।

साल भर की कड़ी मेहनत के बाद इसके नतीजे सामने आए हैं और उत्पादन में चौतरफा वृद्धि हुई है। 1980-81 में कृषि उत्पादन संतोषजनक रहा था औद्योगिक उत्पादन को एक नई दिशा मिली। इस प्रकार अर्थ-व्यवस्था के इन दो बुनियादी क्षेत्रों में एक मजबूत आधार हासिल हो सका है। इन सब प्रयासों के परिणामस्वरूप कुल राष्ट्रीय उत्पादन में साढ़े छः प्रतिशत की वृद्धि का अनुमान है।

1981-82 के बजट को आम आदमी के बजट की संज्ञा दी गई है और इसे छठी पंचवर्षीय योजना के उद्देश्यों, उसकी प्राथमिकताओं और उसके कार्यक्रमों को प्रतिबिम्बित करने वाला आइना कहा गया है। आइए बजट पर हम तनिक बारीकी से गौर करके कमजोर वर्गों को राहत पहुंचाने के जो कदम इसके जरिए उठाए गए हैं उनका जायजा लें। दुर्बल वर्गों के उत्थान का एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम सरकार का एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम है जिसके जरिए 1981-82 की अवधि में तीस लाख परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर खींच लाने का लक्ष्य है। इस कार्यक्रम को अब और अधिक व्यापक आधार प्रदान किया गया है। बजट में इस कार्यक्रम के लिए और मरुस्थलीय विकास तथा सूखे की आशंका वाले क्षेत्रों के विकास जैसे विशेष कार्यक्रमों के लिए एक अरब 98 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है।

कृषि प्रधान देश होने के नाते हमारी अर्थ-व्यवस्था में कृषि की अत्यंत प्रभावशाली भूमिका है। केन्द्र और राज्यों की वार्षिक योजनाओं में कृषि विकास के लिए 1980-81 में आबंटित 9 अरब 25 करोड़ रु० की तुलना में 1981-82 के बजट में दस अरब 47 करोड़ रु० का प्रावधान किया गया है। 1981-82 में 25 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि में सिंचाई सुविधाएं सुलभ करने का लक्ष्य रखा गया है।

कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने के प्रयत्नों के साथ-साथ भूमिहीन मजदूरों, छोटे और सीमांत किसानों, ग्रामीण कारीगरों और अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लोगों को लाभ पहुंचाने के लिए विशेष कार्यक्रमों पर नए बजट में बहुत जोर दिया गया है और इस उद्देश्य से सरकार

ने राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम शुरू किया है। केन्द्रीय बजट में इसके लिए एक अरब 80 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है और इतनी ही राशि की व्यवस्था राज्यों द्वारा की जाएगी।

वित्त मंत्री की इस घोषणा को व्यापक तौर पर सराहा गया है कि कृषि और ग्राम विकास के लिए एक राष्ट्रीय बैंक की स्थापना की जाएगी जो एक शीर्ष संस्था के रूप में ग्रामीण लोगों को ऋण संबंधी जरूरतों को पूरा करेगा। इसके लिए शीघ्र ही संसद में एक विधेयक पेश किया जाएगा। फिलहाल देहाती क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधा के विकास का कार्यक्रम बराबर तेजी से आगे चलाया जा रहा है। 1979 में ऐसे बैंकों की संख्या केवल साठ थी जो इस माह के अन्त तक बढ़कर एक सौ हो जाएगी। 1981-82 में 25 और क्षेत्रीय बैंकों की स्थापना का लक्ष्य है।

अनुसूचित जातियों के विकास कार्यक्रम को नई सरकार के सत्ता में आने के बाद शुरू किया गया था, इनके लिए नए बजट में एक अरब 10 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। जनजातीय क्षेत्रों के विकास की जनजातीय उप योजना के लिए 85 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है जबकि 1980-81 में यह राशि 70 करोड़ रु० थी। इसी प्रकार विशेष पहाड़ी विकास कार्यक्रम के लिए भी 1980-81 के 61 करोड़ रु० की तुलना में इस बार 92 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है।

हमारे गांवों में पीने के पानी की समस्या बड़ी जटिल है इसलिए समस्या-ग्रस्त गांवों में पेयजल की जल्दी से व्यवस्था करने के लिए 1981-82 के बजट में एक अरब दस करोड़ रु० की राशि निर्धारित की गई है। राज्यों द्वारा इस दिशा में जो प्रयास किए जाएंगे उन्हें शामिल कर इस योजना के अन्तर्गत लगभग 36 हजार और गांवों में पीने के पानी की सुविधाएं उपलब्ध की जाएंगी। विकास के आधारभूत ढांचे को मजबूत करने के इरादे से बिजली उत्पादन को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है।

अगले वर्ष में 22 हजार गांवों में बिजली पहुंचाने और 4 लाख 25 हजार पम्प सेटों को बिजली देने की व्यवस्था की जाएगी।

ग्रामीण और लघु उद्योगों के विकास के लिए नए बजट में एक अरब 62 करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। यह राशि राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों के बजट में आवंटित एक अरब 55 करोड़ रु० के अलावा है।

संयुक्त राष्ट्र के आह्वान पर इस वर्ष को सारे विश्व में अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है। इस प्रसंग में अपंगों के लिए कृत्रिम अंग और पुनर्वास सम्बन्धी उपकरणों को पहले से ही उत्पाद शुल्क से मुक्त रखा गया था और अब नेत्रहीनों के काम आने वाली ब्रेल घड़ियों और ब्रेल कागज को उत्पाद शुल्क से मुक्त कर दिया गया है। इसके अलावा व्यक्तिगत उपयोग के लिए आयात की जाने वाली ब्रेल घड़ियां और सुनने के उपकरणों पर सीमा शुल्क को भी काफी घटा दिया गया है।

रिजर्व बैंक ने इसे सुनिश्चित करने के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत तय किए कि प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के ऋण का अधिकाधिक हिस्सा कमजोर वर्गों, खासकर बीस सूत्री कार्यक्रम में निर्धारित वर्गों को मिले। अब यह भी तय किया गया है कि वाणिज्यिक बैंकों द्वारा कृषि सम्बन्धी कार्यों के लिए प्रत्यक्ष रूप से दिए जाने वाले ऋण का आधार हिस्सा छोटे और सीमांत किसानों और खेतिहर मजदूरों को दिया जाएगा। इसके अलावा लघु उद्योगों को दिए जाने वाले कुल ऋण का 12.5 भाग ग्रामीण शिल्पियों और कुटीर उद्योगों के लिए सुरक्षित रखा गया है।

कमजोर वर्गों की ओर इस बजट में जो ध्यान दिया गया है, वह सर्वथा प्रशंसनीय है और इस बात का द्योतक है कि सरकार देश में स्थायित्व कायम करने और लोगों को सामाजिक न्याय दिलाने के वृहत्तर लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सतत प्रयत्नशील है। □

आकाशवाणी से साभार

राष्ट्रीय एकता की कड़ी

यदि मैंने हिन्दी का सहारा न लिया होता तो काश्मीर से कन्याकुमारी और असम से केरल तक गांव-गांव में जाकर मैं भूदान-ग्रामदान का क्रान्तिपूर्ण संदेश जनता तक न पहुंचा सकता। यदि मैं मराठी का सहारा लेता तो महाराष्ट्र से बाहर और कहीं काम न बनता। इसी तरह अंग्रेजी भाषा लेकर चलता तो कुछ प्रान्तों में तो काम चलता परन्तु गांव-गांव जाकर क्रान्ति की बात अंग्रेजी द्वारा नहीं हो सकती थी। इसलिए मैं कहता हूं कि हिन्दी भाषा का मुझ पर बड़ा उपकार है, इसने मेरी बहुत बड़ी सेवा की है।

—आचार्य विनोबा भावे

मरु प्रदेश की संपदा भेड़ और ऊन

राम प्रसाद जाट

राजस्थान का भेड़ और ऊन उत्पादन की दृष्टि से देश में महत्वपूर्ण स्थान है। यहां देश के कुल ऊन उत्पादन की 48 प्रतिशत ऊन पैदा होती है जो नमदे के लिए बहुत उपयुक्त मानी जाती है। यहां की भेड़ों की संख्या भी देश की कुल भेड़ संख्या का लगभग 20 प्रतिशत है।

भेड़पालन और ऊन उत्पादन राज्य के पश्चिमी एवं उत्तरी भाग में रहने वाले लोगों के जीविकोपार्जन का मुख्य साधन है। राज्य के जिस उत्तर-पश्चिमी भाग में भेड़ पालन का मुख्य धंधा है, वह मरुस्थलीय क्षेत्र है और वहां पशुओं के लिए चारा-पानी कठिनाई से उपलब्ध हो पाता है। इस कारण भेड़ पालक अपनी भेड़ों के, जो इनके जीवन निर्वाह का एकमात्र सहारा है, भरण-पोषण के लिए अभाव के दिनों में चारे-पानी की तलाश में राज्य के अन्य भागों में ही नहीं, वरन राज्य के बाहर भी जाने पर विवश हो जाते हैं।

भेड़ पालकों को इस प्रकार के निष्क्रमण की कठिनाइयों से मुक्ति दिलाने के लिए ही राज्य के उत्तर-पश्चिमी भागों में भेड़ों के लिए पानी-चारा उपलब्ध कराने की दृष्टि से चरागाहों के विकास पर विशेष बल दिया गया है।

नवीन पशु पालन योजना तथा सूखा संभावित क्षेत्र विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत भेड़ विकास की विभिन्न योजनाएं क्रियान्वित की जा रही हैं, जिनमें चरागाह विकास और भेड़ पालन इकाई खरीदने के लिए आर्थिक सहायता सुलभ कराना मुख्य है। चरागाह विकास के अतिरिक्त उनके लिए स्वास्थ्य सेवा, रोगों की रोकथाम संकर प्रजनन, ऊन कतरने और विक्रय आदि के कार्य भी सम्पन्न किए जा रहे हैं।

राज्य में पाई जाने वाली भेड़ों की नस्ल जैसलमेर, मालपुरा, मारवाड़ और पूगल, चोकला तथा मगरा कही जाती है। इन सभी से विविध प्रकार की ऊन प्राप्त होती है। ऊन से गलीचा, कम्बल आदि बनाए जाते हैं। उत्पादित ऊन का 8 प्रतिशत भाग बारीक एवं बढ़िया किस्म का होता है जिससे वस्त्र निर्माण कार्य किया जाता है। कम्बल और लोई बनाने के काम में चोकला जैसलमेर की ऊन काम में लाई जाती है।

राजस्थान में निर्मित गलीचे भी विश्व में प्रसिद्ध हैं। इनमें पर्शियन शैली के गलीचे तो अच्छी खासी विदेशी मुद्रा अर्जित करते हैं। जयपुर, बीकानेर, जोधपुर और टोंक में गलीचा निर्माण के श्रेष्ठ केन्द्र हैं। राजस्थान में जो ऊन प्राप्त होती है वह लोचदार होने के कारण गलीचा बनाने के काम में लाई जाती है। यह ऊन दब कर फिर उठने की क्षमता के कारण विश्व प्रसिद्ध है। पूगल, मारवाड़ी और मालपुरा क्षेत्रों में पाई जाने वाली ऊन गलीचे के काम में ली जाने वाली ऊन में सबसे अच्छी समझी जाती है।

इसी कारण राजस्थान ऊन का घर कहलाता है, क्योंकि यहां की ऊन मजबूती में श्रेष्ठ है।

इस सम्पदा के विकास के लिए छठी पंचवर्षीय योजना में 4 करोड़ 50 लाख रुपये खर्च किए जाएंगे। योजना के अन्तर्गत 25 नए भेड़ और ऊन प्रसार केन्द्र खोले जाएंगे। अभी विद्यमान 92 प्रसार केन्द्रों को सघनीकृत किया जाएगा। योजना अवधि में भेड़ विकास कार्य 9 और जिलों में शुरू किया जाएगा। अभी केवल 10 जिलों में यह कार्य चल रहा है।

भेड़ों की नस्ल सुधारने के लिए चित्तौड़गढ़ के भेड़ प्रजनन फार्म पर 50 संकर मेमनों का पोषण कर वितरित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। भीलवाड़ा और चित्तौड़गढ़ जिलों की दो-दो तहसीलों में संकर प्रजनन का सघन कार्यक्रम शुरू किया जाएगा।

राज्य के वर्तमान प्रजनन फार्मो बाकलिया, जयपुर, फतेहपुर, जोहड़बीड़, चित्तौड़गढ़ को आत्मनिर्भर बनाने के लिए वहां चरागाह क्षेत्रों के विकास पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

मरु विकास कार्यक्रम के तहत 3500 हेक्टेयर क्षेत्रों में चरागाहों का विकास किया जाएगा और 3900 भेड़ पालकों को उन्नत भेड़ पालन तकनीक का प्रशिक्षण दिया जाएगा।

भेड़ पालक सहकारी समितियों को समुचित रूप में लाभान्वित करने के लिए राजस्थान राज्य सहकारी भेड़ और ऊन विपणन मंडल की स्थापना की गई है जो भेड़ एवं ऊन का क्रय-विक्रय करता है। यह मंडल भेड़ पालकों और भेड़ पालक सहकारी समितियों से सीधे भेड़ एवं ऊन खरीदता है और विक्रय करता है। इससे बिचौलियों को मिलने वाला लाभ भेड़ पालकों को मिलने लगा है।

राजस्थान में भेड़ विकास के इन कार्यक्रमों से राज्य के मरु भाग के लोगों को जीवन यापन का सहारा मिला है। साथ ही चरागाह क्षेत्रों के विकास से पश्चिमी भाग का मरु क्षेत्र सघन होगा और भेड़ों के चारा पानी की समस्या कम होगी। □

स्वयं-सेवा और समाज-सेवा की अनुपम योजना ※ कमला प्रसाद चौरसिया

बेरोजगारी बढ़ रही है। शिक्षित बढ़ रहे हैं। शिक्षित बेरोजगार बढ़ रहे हैं। सबको नौकरी की तलाश है। कुछ अपनी अदम्य इच्छा के बल पर स्वयं के उद्यम अथवा व्यवसाय में लग चुके हैं किन्तु शिक्षितों का बहुलांश नौकरी को सम्मान-जनक वृत्ति समझकर उसकी आस में भटक रहे हैं। युवकों को यह धारणा तोड़नी होगी। नौकरी के मोहजाल से निकल कर किसी उद्यम से जुड़ने की कोशिश करनी चाहिए। उद्यमों की कड़ी में एक उद्यम है—महिला प्रधान बचत योजना अथवा क्षेत्रीय बचत योजना की एजेन्सियां।

वैसे तो यह एजेंसी व्यक्तिगत-रूप से केवल महिलाओं को ही प्रदान की जाती है किन्तु यह किसी संस्था को भी दी जा सकती है जिसके अन्तर्गत एक से अधिक व्यक्ति कार्यकर्ताओं के रूप में अधिकृत हो सकते हैं।

इस एजेन्सी के अन्तर्गत एजेण्ट को अथवा एजेण्ट कार्यकर्त्ता को परिवारों के एकल अथवा संयुक्त डाकघर आवर्ती जमा (पोस्ट आफिस रेकरिंग डिपाजिट) अथवा डाकघर सावधि संचयी जमा योजना (पोस्ट-आफिस क्युमुलेटिव टाइम डिपाजिट) के खाते खुलवाने होते हैं। ये खाते 5 रु० और उसके गुणितों में खोले जाते हैं। (पोस्ट आफिस क्युमुलेटिव टाइम डिपाजिट खाता कम से कम 30 रु० और उसके ऊपर पांच के गुणितों में खोला जा सकता है। अब यह 5 रु० के मूल्यांकन का नहीं खोला जा सकता।)

जो खाता, जितने मूल्यांश से खोला जायगा, वह मूल्यांश उस खाते में प्रति माह जमा करना पड़ता है। पोस्ट आफिस रेकरिंग डिपाजिट खाता पांच साल और पोस्ट आफिस क्युमुलेटिव टाइम डिपाजिट खाता दस साल का है। दस रुपये प्रति माह जमा करते-करते वर्तमान दरों के अनुसार पोस्ट आफिस रेकरिंग डिपाजिट खाते में 778-10 रु० तथा पोस्ट आफिस क्युमुलेटिव टाइम डिपाजिट खाते में 1693.20 रु० प्राप्त होते हैं। पोस्ट आफिस क्युमुलेटिव टाइम डिपाजिट खातों में 6.75 प्रतिशत करमुक्त चक्रवृद्धि ब्याज प्राप्त होता है जबकि पोस्ट आफिस रेकरिंग डिपाजिट खाते में 10.50 प्रतिशत करयोग्य ब्याज मिलता है।

पोस्ट आफिस रेकरिंग डिपाजिट खाता में 20 रु० तक के मूल्यांश के किसी भी खातेदार के किसी एक खाते पर बीमा का अभिनव लाभ भी प्राप्त होता है। इस लाभ को संरक्षित बचत योजना का नाम दिया गया है। यदि खातेदार खाता खोलते समय 18 वर्ष से 53 वर्ष की आयु-सीमा के अन्तर्गत था और खाता कम से कम 24 माह चल चुका है तो खातेदार की मृत्यु की दशा में (उसकी मृत्यु के दिन तक यदि खाता चालू रहता है तो) उसके नामांकित व्यक्ति को पांच साल बाद देय पूरी परिपक्वता राशि प्राप्त होगी।

एजेण्ट अथवा एजेण्ट-कार्यकर्त्ताओं को सीमित कार्य-क्षेत्र में, जिसका चुनाव वह स्वयं करते हैं, रह रहे परिवारों में इन खातों का प्रचार-प्रसार करना पड़ता है। इच्छुक परिवारों के खाते खुलवाकर उनसे प्रतिमाह जमा इकट्ठी कर उनके खातों में जमा करवाना पड़ता है। इस जमा पर उन्हें 4 प्रतिशत की दर से आकर्षक कमीशन प्राप्त होता है। इस तरह इस योजना की एजेन्सी द्वारा नियमित आय प्राप्त होती है।

कम से कम 5 रु० अथवा 30 रु० से खाता खोलने और उतनी ही राशि नियमित रूप से प्रति माह जमा करने की खातों की प्रकृति से स्पष्ट है कि ये मासिक बचत योजनाएं हर स्तर, और हर वर्ग के जमाकर्त्ता के अनुकूल हैं। बचत कौन नहीं करना चाहता? आने वाले कल की जरूरतों के लिए, गाढ़े दिनों में सुरक्षा के लिए हर व्यक्ति कुछ न कुछ बचाना चाहता है। ऐसी हर योजना को वह बेझिझक अंगीकार कर लेना चाहता है और कर लेता है जो आसानी से उसे बचत करने के लिए उत्साहित करती है। एक तो 5 या 30 रु० की छोटी सी राशि और दूसरी घर-घर से एजेण्ट अथवा एजेंट कार्यकर्त्ता द्वारा जमा का एकत्रीकरण, दोनों मिलकर उसे प्रेरित करती हैं और वह अपने पारिवारिक सदस्यों के नाम खाते स्वेच्छा से खुशी-खुशी खोल लेता है। एक व्यक्ति अपने नाम से अनेक खाते खोल सकता है।

शहरी क्षेत्रों में प्रचार-माध्यमों की अधिकता के कारण शहरी शिक्षित अपनी बचत बढ़ाते हैं किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण इन योजनाओं से लाभ नहीं उठा रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में इन योजनाओं के प्रचार प्रसार की प्रबल संभावना है। नौकरी-पेशा लोगों को माहवारी जमा में आसानी होती है। व्यापारी वर्ग भी माह में कभी भी अपनी जमा दे सकता है किन्तु कृषक-वर्ग प्रति माह जमा करने में कठिनाई अनुभव कर सकता है। यह सही है कि कृषक की आय कृषि के विक्रय पर आधारित होती है। यह समय सामान्यतः वर्ष में एक बार अथवा दो बार (एक-फसली अथवा दोफसली स्थानों के अनुसार) आता है। उनकी सुविधा के लिए खातों में 6 माह अथवा 32 माह की अग्रिम जमा की भी व्यवस्था है। इस अग्रिम जमा पर विशेष छूट प्राप्त होती है। प्रति 30 रु० के खाते में 6 माह की अग्रिम जमा पर 3 रु० और साल भर की अग्रिम जमा पर 4 रु० की छूट प्राप्त होती है। अन्य मूल्यांशों के खातों पर इसी अनुपात में छूट प्राप्त होती है। पंचवर्षीय योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए अल्प बचत योजनाएं एक महत्वपूर्ण आय-स्रोत हैं। □

सांगानेर का हस्तशिल्पी कागज

दुर्गाशंकर त्रिवेदी

मांगलिक अवसरों पर निमंत्रण पत्र के लिए सांगानेर के हाथ से बने कागज का इस्तेमाल अब एक आम बात हो गई है। विश्व प्रसिद्ध गुलाबी नगरी जयपुर के समीप सांगानेर में हाथ से बनने वाला यह कागज वर्षों से जन मनरंजक बना हुआ है। यहां हाथ से बनने वाला यह कागज सुन्दर, आकर्षक और मजबूत तो होता ही है, दाम भी इसका अधिक नहीं है। विदेशी पर्यटकों की भी इसमें काफी रुचि होती है, वे बड़ी मात्रा में इसकी खरीद करते हैं। इस तरह की आधुनिकता की तेज धार में भी यह हस्त-शिल्प बरकरार है।

रोजी रोटी का साधन

वैसे यह लघु उद्योग है। परन्तु बापू की 'स्वदेशी' वाली भावना का पूरक है। सांगानेर कस्बे के लगभग डेढ़ हजार व्यक्ति इससे रोजी-रोटी जुटाते हैं। एक मोहल्ला ही इनका अपना है जो कागजी मोहल्ला कहलाता है। यहां के अधिकांश परिवारों के छोटे-बड़े सभी सदस्य किसी न किसी निर्माण प्रक्रिया में अपनी भूमिका अदा कर रहे हैं। अधिकांश मेहनती सदस्य 20 से 30 रुपए और अर्द्धकुशल व महिलाएं 10 से 20 रुपए तक अमूमन इस काम से प्राप्त कर लेते हैं। इस उद्योग को यदि समुचित प्रोत्साहन मिले तो यह बेरोजगारी निवारण में काफी सहायक हो सकता है। फिर कागज की कमी तो बढ़ती साक्षरता के साथ बढ़ ही रही है।

सहकारिता का माया

वैसे तो यह पुश्तैनी उद्योग है पर सहकारिता ने इस उद्योग में नई जान डाल दी है। इन कारीगरों ने आजादी से पहले ही सहकारिता का महत्व समझने की शुभ आस्था पनपा ली थी। फलस्वरूप 1944 में ही 'हैण्डमेड पेपर कोआपरेटिव सोसायटी" गठित कर ली गई थी। अभी भी इसके 133 सदस्य हैं। लगभग सभी घरों के स्त्री पुरुष इस पुश्तैनी किन्तु सहकारिता के बल पर पनपे हस्तकला उद्योग में जुटे हुए हैं। सुबह से शाम तक कारीगरों की व्यस्तता देखते ही बनती हैं। जयपुर की पुरानी पीढ़ी के लोग कहते हैं कि पहले ये लोग जयपुर की पुरानी बस्ती ब्रह्मपुरी में ही इस धंधे को करते थे। परन्तु बढ़ती मांग और पानी के अभाव का उद्योग के विस्तार पर असर पड़ा तो यह पूरा का पूरा मोहल्ला ही सांगानेर में आकर बस गया। चूंकि सांगानेर में पानी की विपुल सुविधा है अतः यहां यह सुचारु रूप से चलने लगा। पानी की इस उद्योग को बहुत अधिक जरूरत रहती है। अतः यह स्थान बड़ा उपादेय रहा।

पानी, रद्दी और टाट का कमाल

हाथ से बनने वाला यह मनमोहक कागज भरपूर पानी, रद्दी कागजों, सड़े-गले कपड़ों, बोरियों के टुकड़ों, सन के रेशों आदि बेकार वस्तुओं का कमाल है। उनके निपटान और सदुपयोग का महत्वपूर्ण हस्तशिल्प है।

कागजी मोहल्ले में मिर्जा इस्माइल के समय बनाया गया एक कुआं है। यहां पर सबसे पहले सड़े-गले-फटे टाटों, रेशों, रद्दी गत्ते, कागजों, कपड़ों आदि को गला कर घण्टों धुलाई की जाती है। इसके उपरान्त मोटी-सी लुगदी तैयार की जाती है। बाद में इस मोटी-मोटी लुगदी की कई घण्टे तक पिसाई की जाती है। रंगरोगन किया जाता है फिर रंगीन लुगदी अलग और सफेद लुगदी अलग छोटे-छोटे कुंडों में डालकर पांवों से खूब गूंधी जाती है। छोटे बच्चों और किशोरों को इसकी गूंधाई में बड़ा मजा आता है। जब गूंधते-गूंधते कागज की बढ़िया घुटाई हो जाती है तो पानी व लुगदी से छपटी द्वारा कागज तैयार किया जाता है और मकानों के बाहर दीवारों पर तेज धूप में दीवार पर चिपका कर सुखाया जाता है।

जब कागज बन ही रहा होता है तो कागज को मजबूत करने के लिए इसमें लेही भी मिलाई जाती है। अच्छी तरह सूखने पर सफाई, कटाई आदि करके इसको आकर्षक पैकिंग की गरज से पैकेटों में जमा लिया जाता है। कागज को यदि किसी विशेष रंग में रंगना हो या सुनहरी डोरी डालनी हो तो बनाने से पहले लुगदी में मिला लिया जाता है। निमंत्रण पत्रों के काम आने वाले कागज को बनाते समय विशेष ध्यान से रंग संयोजन किया जाता है। खादीग्रामोद्योग सफेद कागज पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों, फोल्डरों और अन्य छपाई के लिए काम में लाता है। निमंत्रण पत्रों में हाथ के कागज ने बाजार में कीमती कार्डों की प्रतिस्पर्धा के बावजूद अपनी जगह बना ली है। वे बड़े आकर्षक लगते हैं, छपाई भी उन पर बहुत बेहतरीन बैठती है।

कागज बनाने की प्रक्रिया में जरूरी सामग्री रद्दी कागज, सड़े-गले कपड़े, टाट, मोटी घास, चूरी, भूसी आदि अक्सर जयपुर के आस पास के इलाके पूरी तरह सप्लाई नहीं कर पाते हैं। अतः बाहर से भी इसे कच्चा माल लेना पड़ता है। फलस्वरूप लागत थोड़ी बढ़ती ही है। किन्तु सफेद कागज, निमंत्रण पत्रों, फाइल कवरों के मोटे कागज, जिल्द के गत्ते और पैकिंग के काम आने वाले गत्ते, कतरन आदि की मांग तेजी से बढ़ रही है। सांगानेरी कागज पर्यटकों के द्वारा दुनिया के लगभग सभी देशों तक अपनी धाक जमाने चला गया है। पर निर्यात की जो मंद गति है, वह बढ़नी आवश्यक है। □

कायाकल्प

अखिलेश्वर

चौधरी जैसुखलाल की बैठक में अध्यापक रामकृष्ण बैठे हुए थे। चर्चा का विषय था—स्कूल में छात्रों की बढ़ती हुई संख्या। नए बने हुए छः पक्के कमरे छात्रों के लिए कम पड़ रहे थे। जन सहयोग से एक और कमरा बनाने की योजना चल रही थी। उसी समय पोस्टमैन आया। एक छोटा सा पार्सल चौधरी जैसुखलाल के हाथ में थमा कर बोला, "लाइये चौधरी साहब, दायें हाथ के अंगूठे पर स्याही लगा दूं। रजिस्टर्ड पार्सल है। रसीद पर अंगूठा लगाना होगा।"

"हूं" चौधरी जैसुखलाल ने गर्दन झटककर स्वाभिमान से कहा, "हस्ताक्षर करूंगा, मोती राम।" फिर कमीज की जेब में टंगा हुआ पैन निकाल कर चौधरी जैसुखलाल ने बहुत सुंदर-सुपाठ्य अक्षरों में हस्ताक्षर कर दिए। पोस्टमैन मोतीराम अवाक रह गया।

पार्सल खोलकर, चौधरी जैसुखलाल रामकृष्ण से बोले, "हरीश ने दो पुस्तकें भेजी हैं :– 'प्रौढ़ शिक्षा : एक महत्वपूर्ण प्रायोजना' और दूसरी का नाम है 'स्वावलंबी कैसे बनें।' लो चिट्ठी भी लिखी है" कहते हुए चौधरी जैसुखलाल अपने पुत्र का पत्र पढ़कर सुनाने लगे :—

आदरणीय पिता जी,

सादर चरण स्पर्श।

आपके हाथों का लिखा हुआ पत्र पढ़कर मेरी प्रसन्नता की सीमा नहीं रही। आश्चर्य हुआ कि आप इतने कम समय में ही इतना सुंदर और सुपाठ्य लिखने लगे हैं। सचमुच यह सब श्री रामकृष्ण के परिश्रम और लग्न का ही फल है। ऐसे सुयोग्य और कर्मठ अध्यापक ही राष्ट्र का निर्माण करते हैं। मेरी ओर से उन्हें विनम्र प्रणाम कहें ...."।

चौधरी जैसुखलाल पढ़ते जा रहे थे लेकिन रामकृष्ण किसी और ही दुनिया में डूब रहे थे। उनकी आंखों के सामने कुछ ही समय पूर्व के दृश्य चलचित्र की भांति घूमने लगे।

उन्हें इस गांव में आए एक ही महीना हुआ था। इतने कम समय में ही वह गांव के लोगों से तंग आ चुके थे। कभी कोई पत्र लिखवाने आ जाता, तो कभी कोई आया हुआ पत्र पढ़वाने। कोई पूछता कि इस भाव से इतना बाजरा बेचकर आया हूं, कितने रुपये हुए ? कोई कहता—"भइया, साढ़े आठ रुपये प्रति मीटर की दर से पौने पांच गज पापलीन लाया हूं, जरा जोड़ लगाना कितने पैसे बने ?"

"अनपढ़ों के इस गांव में आकर मैं तो परेशान हो गया", राम कृष्ण ने अपनी पत्नी से कहा था, "इससे अच्छा तो यह है कि किसी और जगह बदली करवा लूं। यहां का स्कूल भी बहुत छोटा है। दो कच्चे कमरे और मुश्किल से बीस-पच्चीस लड़के। करने-धरने को कुछ है नहीं, अनपढ़ लोग तो निरक्षर

भट्टाचार्य रह गए, अपने बच्चों को भी स्कूल भेजने की बजाय जोहड़ तालाबों पर खेलने भेज देते हैं।

"दूसरे गांव में पढ़े लिखे लोग मिल जाएंगे, इस बात का आपको पूरा विश्वास है ?" कान्ता ने पूछा।

"पढ़े-लिखे लोग न सही, स्कूल तो ढंग का मिल जाएगा", राम कृष्ण का उत्तर था।

"बुरा मत मानना", कान्ता ने कहा था, "आप अध्यापक हैं। स्कूल को छोटा-बड़ा बनाने में क्या आपका कोई दायित्व नहीं ? गांव के बच्चे अनपढ़ रहें, इसमें आपका और आपके व्यवसाय का कोई अपमान नहीं ?"

"मैं क्या कर सकता हूं । जब लोग बच्चों को पढ़ने ही न भेजें तो मैं क्या जोहड़ तालाबों पर जाकर पढ़ाता फिरूं" रामकृष्ण ने खीजकर कहा था।

"नहीं", कान्ता सहज स्वर में बोली थी, "आपका दायित्व है कि आप जन-सम्पर्क बढ़ाएं गांव के लोग बड़े सीधे और सरल हैं, उनसे मिलें । उन्हें प्रेरणा दें कि वे अपने बच्चों को आवारा न घूमने दें बल्कि स्कूल भेजें । उन्हें शिक्षा का महत्व बताएं ।" कुछ रुककर कांता गंभीर स्वर में बोली थी, "मैं तो चाहूंगी कि आप गांव के स्त्री-पुरुषों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें । उन्हें अक्षर-ज्ञान के साथ-साथ दैनिक जीवन के रहन-सहन, स्वास्थ्य, सफाई, हिसाब-किताब संबंधी शिक्षा दें तभी आप अपने व्यवसाय के प्रति न्याय कर सकेंगे।" 43

"तो तुम चाहती हो कि मैं बच्चों के साथ-साथ बूढ़ों की भी कक्षाएं लगाऊं ।"

"आपका फर्ज बनता है ।" कांता बोली थी, "फिर मैं भी दिनभर खाली रहती हूं । गांव के लोगों को साक्षर बनाने में तुम्हारी मदद कर सकती हूं । हमारे थोड़े से परिश्रम से यदि गांव के लोग कुछ सीख जाएं तो इसमे बड़ी प्रसन्नता और क्या होगी ।"

"तुम ठीक कहती हो कांता । "रामकृष्ण के दिमाग में कांता की बात बैठ गई थी, " मैं आज से ही जनसम्पर्क शुरू करूंगा। गांव में साक्षरता अभियान चलाऊंगा ।"

दूसरे ही दिन गाँव में चर्चा होने लगी थी कि अध्यापक रामकृष्ण ने गांव के लोगों की एक बैठक बुलाई है । बच्चों के साथ-साथ स्त्री-पुरुषों को भी पढ़ाने का फैसला किया है । शाम के खाने के बाद सभी लोग चौपाल में इकट्ठे होंगे । रामकृष्ण घर-घर जाकर लोगों को बैठक में पहुंचने का निमंत्रण दे आए हैं।

शाम को गांव के युवक, प्रौढ़ और बड़े-बूढ़े लोग चौपाल में इकट्ठे होने लगे थे । रामकृष्ण ने पहले से ही वहां स्कूल की दरियां और टाट-पट्टियां बिछवा दी थीं । स्त्रियों के बैठने की अलग व्यवस्था थी । जिज्ञासा और उत्सुकता से भरी महिलाएं भी आने लगी थीं । पूरी सभा जुट गई थी । रामकृष्ण ने बोलना शुरू किया था, "मुझे इस गांव में आए अभी एक माह हुआ है । मुझे यह जानकर बड़ा दुख हुआ कि आप लोग घर पर आई हुई चिट्ठी-पत्री तक नहीं पढ़ सकते । हिसाब-किताब करवाने के लिए भी आपको दूसरों का मुंह ताकना पड़ता है । अपने बच्चों की पढ़ाई के प्रति भी आप जागरुक नहीं हैं। बच्चे राष्ट्र की धरोहर हैं। इनकी ओर आप ध्यान देंगे तभी कल को आपके बच्चे देश के अच्छे नागरिक, नेता और अफसर बनेंगे। आप लोग यदि सहयोग दें तो मैं आपको और आपके बच्चों को शिक्षित करने का बीड़ा उठाऊं, ताकि छोटी-छोटी बातों के लिए आपको दूसरों का मुंह न ताकना पड़े । आपके बच्चों का भविष्य उज्ज्वल हो।"

बैठे हुए लोगों में चर्चाएं होने लगी थीं । तरह-तरह के प्रश्न उठने लगे थे । रामकृष्ण के साथ-साथ कांता भी धैर्यपूर्वक उनकी शंकाओं का समाधान कर रही थी । दोनों ने मिलकर तरह-तरह की बातें उन्हें समझाई । प्रौढ़ शिक्षा के महत्व, तरीकों, और लाभ पर प्रकाश डाला । निर्णय लिया गया कि कल से यहीं स्त्री और पुरुषों को नियमित रूप से पढ़ाने का कार्यक्रम आरंभ होगा । गांव के लोग प्रतिदिन अपने बच्चों को स्कूल भेजेंगे । खुद भी खाली समय को गप्पें हांकने में बरबाद नहीं करेंगे बल्कि पढ़ने लिखने में लगाएंगे।

दूसरे ही दिन स्कूल में छात्रों की संख्या में आशातीत वृद्धि हुई थी । शाम को चौपाल में भी प्रौढ़ों की कक्षा लगी थी । रामकृष्ण और कांता ने बड़ी लगन से उन्हें स्वास्थ्य और सफाई संबंधी महत्वपूर्ण बातें बताई थीं । अक्षर-ज्ञान का पहला पाठ शुरू हो गया था । देखते-देखते गांव में प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र स्थापित हो गया था । गांव के लोगों की पढ़ने-लिखने में दिलचस्पी पैदा होने लगी थी।

"अरे, आप कहां खो गए, रामकृष्ण जी ?" चौधरी जैसुखलाल ने रामकृष्ण का ध्यान भंग किया, "सुना नहीं आपने, हरीश ने क्या लिखा है ?"

"क्या लिखा है?" रामकृष्ण ने सहज होकर पूछा।

"लिखा है—गांव की ओर से आपका सार्वजनिक अभिनंदन किया जाएगा । आपको मान-पत्र भेंट किया जाएगा । आपने गांव का कायाकल्प किया है । स्कूल के दो कच्चे कमरों की जगह छः पक्के कमरे बनवाए हैं । युवक-युवतियों और प्रौढ़ों को भी पढ़ने-लिखने लायक बनाया है।"

"सब आप लोगों के सहयोग का ही परिणाम है," रामकृष्ण ने विनम्रस्वर में कहा ।

"हरीश जल्द ही छुट्टी लेकर आने वाला है । वह इस विषय में उच्च शिक्षा अधिकारियों से भी बात कर चुका है।" चौधरी जैसुखलाल ने भाव विभोर होकर कहा।

"चौधरी साहब, कांता की प्रेरणा न होती तो यह सब शायद सम्भव न होता ।" रामकृष्ण ने कृतज्ञभाव से कहा, "उसी ने मुझे नींद से जगाकर मेरा कर्त्तव्य सुझाया था । यह शुभ सूचना उसे इसी समय जाकर दूंगा ।" कहते हुए रामकृष्ण उठ खड़े हुए और तेज-तेज कदमों से घर की ओर चल पड़े।□

30, मंडी ब्लाक
श्री करनपुर-335073 (राजस्थान)

साहित्य समीक्षा

इस मोड़ से : लेखक : डा० जीवन प्रकाश जोशी, प्रकाशक: संधान प्रकाशन, लाजपत नगर, नई दिल्ली, पृष्ठसंख्या : 64, मूल्य : 10 रुपये ।

'इस मोड़ से' डा० जीवन प्रकाश जोशी का ग्यारहवां (मुखबंध के वक्तव्य के अनुसार) काव्य संग्रह है । जोशी जी ने अपनी काव्य यात्रा का प्रारम्भ दो दशक पूर्व किया था और यह एक सुखद संयोग है कि उनमें कविता अभी नए-नए मोड़ ले रही है । जोशीजी बड़े लिखखाड़ कवि हैं, समय ने इनकी संवेदना को भोथरा नहीं किया, अपितु उसे तीव्रता प्रदान की है । गति की यह तीव्रता 'इस मोड़ से, में देखी जा सकती है कि वे एक दिन में और एक सांस में एक नहीं कई-कई कविताएं और एक दिन नहीं हफ्तों तक लगातार लिखते हैं । इस तेज रफ्तार ने जहां उनकी कविता संख्या को बढ़ाया है वहां कविताओं में गहराई को घटाया है तथा कविताएं इकहरी हो गई हैं जबकि अनुभवशील कवि से ऐसी अपेक्षा नहीं की जा सकती । कविता कोई हड़बड़ी का व्यापर नहीं उसे तो अनुभवों का मंदा-मंदा ताप चाहिए जैसे कुम्हार के आवे में लगे मिट्टी के बर्तनों को । कवि अनुभवों की जुगाली कर-करके उन्हें जीता है, उन्हें पीता है और उन्हें पचाकर वाणी देता है जिससे निस्संगता एवं तटस्थता स्वयं आ जाती है । यहां ऐसा लगता है जैसे कवि किसी विचार-स्फुलिंग के फूटने के साथ ही शब्दों की छैनी-हथौड़ी को लेकर पिल पड़ता है और घंटों की जगह मिनटों में कविता तैयार करके प्रस्तुत कर देता है । कवि की अभिव्यक्ति का लहजा और रुख तो इन कविताओं में निश्चित बदला है, लेकिन कविताएं फिर भी फारमूलाबद्ध ही हो गई हैं । सामाजिक यथार्थ की गहरी संश्लिष्टता इन कविताओं में नहीं उभर पाती । जो भी है, कवि निष्ठा-पूर्वक प्रयत्नवान है और भविष्य में आगे का सफर तय कर सकता है, ऐसी संभावना है ।

इस संग्रह में छोटी-बड़ी कुल 60 कविताएं हैं जो भीतरी बाहरी जिंदगी की सच्चाइयों का साक्षात्कार कराने का प्रयत्न करती हैं । इन कविताओं को दो भागों में बांटकर समझा जा सकता है । एक तो वे कविताएं हैं जो आत्मपरक हैं जिनमें कवि निजी अनुभवों के सहारे अपने वैयक्तिक जीवन और परिवेश को उद्‌घाटित करता है । दूसरे प्रकार की कविताएं वे हैं जो सामाजिक परिवेश की टकराहटों और मूल्यों से उपजी हैं । उनकी आत्मपरक कविताओं में 'जब जब', 'मां,' 'जब मैं न रहूं', 'ओ निजी विषे', 'हस्पताल में होना, 'भूली यादें' 'जो रास्ता चला,' 'इस समय', 'पूजा मैं किसकी करता', 'दिनन के फेर,' 'दान-प्रतिदान' आदि हैं जिनमें कवि अपने मीठे कड़वे अनुभवों की व्यक्ति कथा कहता है । यह कथा कोई बहुत गहरी विसंगति पर चोट करती नहीं दिखलाई पड़ती अपितु सामान्य के क्षणों को रचनात्मक लय सी प्रदान करती है । 'जब मैं न रहूं', कविता का कवि अप्रत्यक्ष रुप से अपने अहं को स्थापित करता हुआ अपनी खीझ व्यक्त करता है :—

जब मैं न रहूं
तब/मेरा लिखा वह सब जला देना
जिसे पढ़ने पर लगे कि
वह पुरस्कार के काबिल था
और/अपुरस्कृत रह गया ।

कवि की आत्मपरक कविताओं की अपेक्षा उसकी समाजोन्मुखी कविताओं की संख्या भी ज्यादा है और उनमें ताकत भी कहीं अधिक है ।

दरअसल सच्चाई यह है कि जोशीजी की कविताओं में सामाजिक यथार्थ की पकड़ तो है लेकिन उसका रचाव पक्ष कमजोर है । सपाट बयानी से भी गहरे अर्थों और अभिप्रायों की बुनावट कविता में होती है, जहां एक नहीं कई-कई अर्थ खुलते हैं, व्यंग्य उभरते हैं और रचना व्यक्ति को गहरे झकझोर उसे परेशान करती है, लेकिन यहां कुछ और बात है । कविता प्रभावन्विति की जगह ऊपर से गुजर जाती है । जो भी हो 'इस मोड़ से' काव्य संग्रह में नए मार्ग की तलाश की छटपटाहट है ।□

डा० ज्ञान विद्यावाचस्पति

अंतिम संदेश : लेखक : खलील जिब्रान, अनुवादक : नरेन्द्र चौधरी, प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 59, मूल्य : 4 रुपये ।

अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के चिंतक, कवि और चित्रकार खलील जिब्रान के साहित्य में मानवीय संवेदनाओं का सागर हिलोरें लेता है । उन्होंने मानव की गरिमा और प्रतिष्ठा के लिए अपना सम्पूर्ण साहित्य रचा । वह अपने रहस्यमय और क्रान्तिकारी विचारों को सीधे-सरल शब्दों लेकिन प्रभावजनक शैली में सजाकर रखने में सिद्धहस्त हैं । इसी कारण जिब्रान के गहन विचार सीधे मनुष्य के हृदय में उतर जाते हैं ।

जिब्रान ने वर्षों पहले जो लिखा वह आज भी न केवल उतना ही महत्वपूर्ण और सत्य है बल्कि समय की कसौटी पर घिसकर वह और भी प्रखर और ओजस्वी हो गया है। प्रस्तुत पुस्तक की शैली और शिल्प को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने इसे अपनी विश्वविख्यात पुस्तक "दि प्रोफेट" के परिशिष्ट के रूप में लिखा। संभवतः "दि प्राफेट" में जो कुछ छूट गया उसे ही जिब्रान ने 'अंतिम संदेश' में पूरा किया। पुस्तक में जिब्रान के बनाए हुए छह प्रभावशाली चित्र भी दिए गए हैं।

'अंतिम संदेश' पढ़ना शुरू करते ही जिब्रान की सादगी, चुम्बकीय शक्ति वाली शैली और विचारों की गहनता सामने आने लगती है। यह भी महसूस होता है कि उनकी काव्यमय शैली एक प्रबल किन्तु कोमल, भयानक किन्तु मधुर, आंसुओं में भीगे मगर आनन्ददायक—सभी तरह के भावों की अभिव्यक्ति में सफल है। जब वह लिखते हैं, "मेरे मित्रो और मेरे हमराहियो! वह देश दयनीय है, जो अंधविश्वासों से भरा है, धर्म से शून्य है" और "दयनीय है वह देश, जो अनेक टुकड़ों में बंटा हुआ है, और प्रत्येक टुकड़ा अपने को एक देश समझता है" तो लगता है कि उनकी लेखनी किसी एक काल अथवा देश के लिए नहीं है। उनका साहित्य हर काल और हर देश के लिए विश्व-बन्धुत्व, शांति, तथा मनुष्यता का संदेश देने वाला है।

पुस्तक का अनुवाद सुन्दर बन पड़ा है। इस अत्यंत हृदय स्पर्शी भावभूमि वाली और प्रेरणादायक पुस्तक के लिए अनुवादक एवं प्रकाशक बधाई के पात्र हैं।□

शम्भु नाथ मिश्र

'संचार माध्यम' पत्रिका का प्रवेशांक : सम्पादक : डा० रामजी लाल जांगिड, प्रकाशक : भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली, वार्षिक मूल्य : 5 रुपये।

हिन्दी में यह पहली पत्रिका है जो समग्र रूप से संचार माध्यमों की सामग्री प्रस्तुत करती है। इस विषय पर अंग्रेजी में तो कई पत्रिकाएं निकली हैं किन्तु अभी तक न तो हिन्दी में और न ही अन्य भारतीय भाषाओं में इस विषय पर कोई सम्पूर्ण पत्रिका प्रकाशित हुई है। हां, 'लोकराज' और 'युवराज' जैसी कुछ पत्रिकाओं में यदाकदा संचार माध्यमों की जानकारी दी जाती रही है।

पत्रिका की साज-सज्जा आकर्षक और सुव्यवस्थित है। इसमें लेखों का चयन बड़ी कुशलता और उपादेयता की दृष्टि से किया गया है। कांति देव का लेख 'प्रशासन में हिन्दी' सरकारी कामकाज में राजभाषा के प्रयोग के सम्बन्ध में अच्छी जानकारी प्रस्तुत करता है, जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि 'जब हम सरकारी काम करते हैं तो हमारा उद्देश्य साहित्य सृजन नहीं होता बल्कि किसी मामले के बारे में केवल अपनी राय साफ शब्दों में कहना भर है'। इसमें सरल हिन्दी के प्रयोग की उपादेयता को स्वीकारा गया है। डा० भानु शंकर मेहता ने नाटक को साहित्यिक सम्प्रेषण के माध्यम के रूप में प्रस्तुत किया है। मधुमालती का लेख "भारत में पत्रकारिता के 200 वर्ष" इस अवधि के अखबारों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है जो निश्चय ही ज्ञानवर्द्धक है। हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं की संख्या 1971 में 3,756 थी जो 1981 में ताजे आंकड़ों के अनुसार बढ़कर काफी अधिक हो गई है और जो अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं से काफी अधिक है। 1826 ईसवी में प्रकाशित हिन्दी के सर्वप्रथम पत्र 'उदन्तमार्त्तण्ड' की मुद्रण शैली तथा भाषा के स्वरूप को भी पाठकों के सम्मुख रखा गया है। 'सोवियत सिनेमा' लेख में डा० रामजीलाल जांगिड ने विभिन्न देशों में सिनेमा घरों के सम्बन्ध में तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। पत्रिका में नाइजीरिया, आस्ट्रेलिया, दक्षिण कोरिया तथा अमेरिका आदि देशों में जन सम्पर्क रेडियो प्रसारण के सम्बन्ध में उपयोगी लेख संगृहीत हैं।

आशा है "संचार माध्यम" द्वारा पत्रकारिता के क्षेत्र में एक अभाव की पूर्ति हो सकेगी और पत्रिका निश्चय ही संवाददाताओं और पत्रकारों का मार्गदर्शन कर सकेगी। □

डा० परमानन्द पांचाल,
वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी,
कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग

प्राचीन भारत—एक रूपरेखा : लेखक : डी० एन० झा, प्रकाशक : पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 148, मूल्य : 10 रुपये।

इस पुस्तिका में छठी शताब्दी में गुप्त साम्राज्य के पतन तक के ऐतिहासिक तथ्यों का मूल्यांकन किया गया है। सात अध्यायों में विभाजित इस पुस्तिका में सामन्तवाद के उदय से पूर्व काल को प्रकाश में लाया गया है। भारतीय इतिहास पर शोधकार्य भारतीय विद्वानों द्वारा शुरू हुआ। जर्मनी के एक पादरी मेक्समुलर ने यह लिखा कि भारतीय जीवन चिन्तनशील और दार्शनिक है। वह इतना प्रभावित हुआ कि उसने अपना नाम मोक्षमूल बताना शुरू कर दिया। स्मिथ द्वारा लिखित भारतीय इतिहास के महत्व को भी कम नहीं किया जा सकता। परन्तु उसके निष्कर्ष वास्तविकता से दूर रहे। उसने अंग्रेजों के शासन को इतिहास सम्मत बताया। भारतीय विद्वानों ने हिन्दू पुनर्जागरण—वाद के लिए पूरी शक्ति लगाकर काम करना आरम्भ किया। अंग्रेजों ने भारतीय इतिहास को हिन्दू, मुस्लिम, ब्रिटिश कालों में विभाजित करके अपरोक्ष रूप से हिन्दू—मुस्लिम समस्याओं को जन्म दिया। तात्पर्य यह है कि भारतीय समाज, यहां की अर्थ-व्यवस्था तथा गतिशील तत्वों पर ध्यान ही नहीं दिया गया। प्रस्तुत पुस्तिका इसी कमी को पूरा करने की ओर एक बढ़ता कदम है। शैली रोचक और निरूपण विवेचनात्मक है, जो पुरातत्व की ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए आवश्यक ही कहे जाएंगे। प्रकाशक बधाई के पात्र हैं कि किताब का मूल्य कम रखा है। □

डा० तारा चरण रस्तोगी
बीरू बाड़ी, गौहाटी-781016

केन्द्र के समाचार

समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम

भारत सरकार के पुनर्निर्माण मंत्रालय द्वारा लिए गए निर्णय के अनुसार समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत सहायता प्राप्त करने वाले हरिजन और आदिवासी परिवारों का न्यूनतम प्रतिशत 20 से बढ़ाकर 30 कर दिया गया है क्योंकि इन परिवारों में कृषि श्रमिकों का एक बड़ा भाग है और दूसरे इनमें ग्रामीण क्षेत्रों में कम आय के वर्गों के लोग सम्मिलित हैं। इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण जन-संख्या को लाभ पहुंचाना है। इसके अन्तर्गत कमजोर वर्ग के लोगों को सहायता देना है ताकि वे अधिक आय अर्जित कर गरीबी की सीमा से ऊपर उठ सकें। सभी राज्य सरकारों और कार्यान्वियन एजेंसियों को यह निर्देश दिए गए हैं कि इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए उपलब्ध साधनों का 30 प्रतिशत और हरिजन एवं आदिवासी परिवारों के लिए भी कम से कम 30 प्रतिशत भाग सुनिश्चित किया जाए। छठी योजना के दौरान इस कार्यक्रम के अन्तर्गत एक करोड़ 50 लाख परिवारों को लाभ प्राप्त होने की संभावना है जिनमें 50 लाख परिवार हरिजन और आदिवासी होंगे।

जौ की नई किस्मों से भरपूर उपज

जौ की खेती और उसकी उन्नत किस्मों के विकास की ओर बहुत ध्यान दिया जाता है। किन्तु अब अखिल भारतीय जौ समन्वय विकास कार्यक्रम के अन्तगत इसकी कुछ उन्नत किस्में विकसित की गई हैं जो न केवल अधिक उपज देती हैं बल्कि वे भूसी रहित भी हैं। इन किस्मों को यदि गेहूं के साथ रख दिया जाए तो दोनों में अन्तर करना अत्यन्त कठिन है। जौ की तीन किस्में बोने के लिए वितरित की गई हैं। इन किस्मों को बारानी, क्षारीय तथा लवणीय भूमियों में उगाया जा सकता है। ये किस्में उत्तर प्रदेश के पूर्वी क्षेत्रों, मध्य प्रदेश, राजस्थान और हरियाणा के गुड़गांवा, मोहिन्दर-गढ़ में उगाने के लिए उत्तम पाई गई हैं। विशेष गुणों वाली जौ की ये तीनों किस्में जल्दी तैयार होने वाली किस्में हैं। करन-201 में प्रोटीन 14.88 प्रतिशत होता है। लाइसीन अधिक मात्रा में और ग्लूटीन बिल्कुल नहीं होता। इसकी प्रति हैक्टेयर 42.5 क्विंटल उपज मिल जाती है।

लघु कृषकों को 94.86 लाख रुपये के ऋण

लघु कृषक विकास अभिकरण, बिलासपुर द्वारा वित्त वर्ष के माह फरवरी, 1981 के अन्त तक 25240 लघु तथा सीमांत कृषकों को 94.86 लाख रुपये के ऋण सुलभ कराए गए। ये ऋण वाणिज्यिक व सहकारिता बैंकों के माध्यम से वितरित किए गए। वाणिज्यिक बैंक के द्वारा 986 कृषकों को 10.22 लाख रुपये एवं सहकारिता बैंक के द्वारा 24254 कृषकों को 84.64 लाख रुपये वितरित किए गए। अभिकरण की रिपोर्ट के अनुसार 138 कृषकों को प्रशिक्षित किया गया तथा 18014 किसानों को परिचय-पत्र प्रदान किया गया। साथ ही 15882 व्यक्तियों का पंजीयन किया गया।

आधुनिक स्वास्थ्य सुविधाएं

ग्रामीण क्षेत्रों में आधुनिक स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए कई उपाय किए गए हैं। उन्हें ये सुविधायें समुन्नत प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, ग्रामीण औषधालयों, उप-केन्द्रों के जरिये तथा विभिन्न राष्ट्रीय कार्यक्रमों और योजनाओं जैसे समयानुकूलन चिकित्सा शिक्षा योजना, बहुद्देशीय कार्यकर्ता योजना, परम्परागत प्रसव करवाने वाली दाइयों की प्रशिक्षण योजना, जन स्वास्थ्य रक्षक योजना आदि के जरिये दी जाती हैं। पहली अप्रैल, 1980 को देश में 5499 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र चल रहे थे। छठी पंचवर्षीय योजना में 600 और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खोलने का विचार है।

पहली अप्रैल, 1980 को 340 समुन्नत प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र चल रहे थे। छठी योजना के दौरान 174 और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों को उन्नत करके 30-30 पलंगों वाले ग्रामीण अस्पताल बनाने का विचार है। इस प्रकार 40,000 और उप-केन्द्रों को इस छठी योजना में खोलने की भी योजना है।

एक वृक्ष लाखों रुपये का

वृक्ष काटने वाले को पल भर के लिए भी यह विचार नहीं आता कि उसकी बहुत मामूली सी जरूरत तो शायद पूरी हो जाती है, लेकिन इससे मनुष्य ही नहीं, बल्कि प्रकृति और पशु-पक्षी भी उससे प्राप्त होने वाले लाखों रुपये के लाभ से वंचित हो जाते हैं। एक वृक्ष से उसके 50 वर्ष के औसत जीवन काल में अलग-अलग रूप में 15 लाख 50 हजार रुपये मूल्य के बराबर लाभ मिलते हैं। वृक्ष से कुल मिलाकर जो आक्सीजन मिलती है उसका मूल्य लगभग 2.50 लाख रुपये होता है। एक वृक्ष पानी के चक्र को बनाए रखने तथा नमी पर नियंत्रण रखने के रूप में 3 लाख रु०, भू-क्षरण को रोकने तथा मिट्टी के उपजाऊपन को बनाए रखने में 2.50 लाख रु० और वायु को प्रदूषित करने वाले तत्वों को आत्मसात करके इसे ताजा बनाकर पांच लाख रु० का योगदान देता है। पशु पक्षियों को जो छाया व आराम मिलता है वह 2.50 लाख रु० के बराबर होता है।

कृषि उत्पादन में 18 प्रतिशत की वृद्धि

वर्ष 1980 के दौरान, देश में कृषि उत्पादन में पिछले वर्ष की अपेक्षा 18 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस समय देश में 22 प्रतिशत खाद्यान्न, 21 प्रतिशत से अधिक गन्ना और लगभग 16 प्रतिशत तिलहनों के अतिरिक्त उत्पादन होने की सम्भावना है। खाद्यान्नों का उत्पादन 13 करोड़ 30 लाख टन होने की सम्भावना है और यह पिछले वर्ष के उत्पादन से 2 करोड़ 40 लाख टन अधिक है। यह उत्पादन वर्ष 1978-79 के रिकार्ड उत्पादन से लगभग 10 लाख टन अधिक है। केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा किए गए विभिन्न उपायों और मौसम के अनुकूल और सामान्य रहने के फलस्वरूप वर्ष 1980-81 की अवधि के दौरान खरीफ के मौसम में खाद्यान्नों का रिकार्ड उत्पादन 795 लाख टन हुआ जो पिछले वर्ष के खरीफ के मौसम में हुए उत्पादन से 160 लाख टन अधिक है।

किसानों को भंडारण सुविधा

किसानों को भंडारण सम्बन्धी सुविधाएं सुलभ करने के लिए हाल ही में एक योजना शुरू की गई है जिसमें गांवों के एक समूह के लिए छोटे-छोटे आकार के भंडारों का निर्माण करने की व्यवस्था है। ग्रामीण क्षेत्रों में काम कर रहे केन्द्रीय और राज्य भंडार किसानों के लिए प्रदर्शन केन्द्रों के रूप में कार्य करते हैं ताकि उन्हें वैज्ञानिक भंडारों के लाभों के बारे में जानकारी मिल सके। जो किसान अपनी फसल केन्द्रीय गोदामों में रखते हैं, केन्द्रीय भंडार उन्हें भंडारण के खर्चे में छूट देता है। केन्द्रीय भंडार निगम ने हाल ही में प्रत्येक क्षेत्र के एक चुने हुए भंडार में कृषक विस्तार सेवा शुरू की है। अनाज सुरक्षा अभियान योजना के अन्तर्गत किसानों को साधारण वैज्ञानिक तकनीक के साथ बचाव करने के बारे में बताया जाता है।

विशाखापतनम में इस्पात कारखाना

सरकार ने सोवियत संघ के सहयोग से विशाखापतनम में एक इस्पात संयंत्र कायम करने का निश्चय किया है। इस इस्पात कारखाने में 6 साल के भीतर 34 लाख टन इस्पात का निर्माण होने लगेगा। सरकार ने इस्पात निर्माण का इतना बड़ा काम पहली बार अपने हाथ में लिया है। इस कारखाने में पहले इस्पात कारखानों की अपेक्षा बहुत ज्यादा उत्पादन होगा। इसलिए सरकार इस योजना को जल्दी से जल्दी अमल में लाने के लिए आतुर है।□

पथरी का होम्योपैथिक उपचार

※ डा० बी० पी० मिश्र

गुर्दे, पेशाब की नली एवं पेशाब की थैली में पथरी की तकलीफ बहुत लोगों को हो जाती है। इस रोग में पीठ की एक तरफ कभी दोनों तरफ तेज दर्द होता है। इसी प्रकार का तेज दर्द पेट में भी एक तरफ अथवा दोनों तरफ होता है। दर्द ऊपर से पेडू तथा जंघा तक या पेशाब के रास्ते तक आता है। दर्द के साथ-साथ बार-बार पेशाब करने की इच्छा, पेशाब में जलन भी होती है। बहुत ही बेचैन करने वाला दर्द होता है।

इलाज

इस तकलीफ में पानी एवं अन्य तरल पदार्थों का अधिक से अधिक मात्रा में सेवन करना चाहिए। नीचे लिखी दवाइयों के व्यवहार से पथरी पेशाब के साथ बाहर निकल आती है एवं तेज दर्द के समय दर्द मिटाने में सहायता करती है।

बरबरिस वल्गेरिस 6-3 शक्ति

तेज दर्द के समय 10-15 मिनट के अन्तर पर लें। दर्द अधिकतर बायें भाग में होता है। पेशाब में जलन होती है। दर्द ऊपर से चलकर जांघ तक आता है अथवा पेडू तक। इस दवा का मूल अर्क दर्द कम हो जाने पर 10 बूंद ठंडे पानी के साथ मिलाकर सवेरे-शाम लेने से पथरी गलकर अथवा पूरी की पूरी बाहर निकल आती है।

नक्स वौमिका-200

दर्द दाईं ओर हो। दर्द पेडू तक आए। साथ में पेट में गड़बड़ी, जैसे कब्जियत अथवा वायु विकार रहे। सप्ताह में दो बार कुछ महीनों तक सेवन करें।

लाइकोपोडियम-200

इसमें दर्द अधिकतर दाईं ओर होता हो। दर्द पेशाब के रास्ते तक जाता हो। पेशाब जमा रहने पर बर्तन में नीचे रेत जम जाए। पेशाब में जलन हो। पेट में वायु विकार हो। सप्ताह में दो बार लें।

सारसापैरिला-30

पेशाब की थैली में पथरी हो। बार-बार पेशाब की इच्छा हो। पेशाब में रुकावट हो। पेडू में दर्द हो। पेशाब गर्म एवं जलन के साथ हो। चार घंटे के अन्तर पर लें।

औसिमम कैनम-6

जब लाईकोपोडियम के लक्षण वाली तकलीफ हो परन्तु उसके व्यवहार से लाभ न हो तो इसका दिन में तीन बार सेवन करें।

बेलेडोना-30

तेज अचानक उठने वाला दर्द। फिर थोड़ी देर बाद अचानक दर्द खत्म हो जाए। पेशाब के रास्ते में रुकावट का अनुभव हो। ऐसा लगे कि कुछ चीज पेशाब के रास्ते में अटक रही है। 10-15 मिनट के अन्तर पर लेने से पथरी बाहर निकल आती है एवं दर्द कम हो जाता है। □

डी०-770, मंदिर मार्ग,
गोल मार्किट,
नई दिल्ली-110001

पहला सुख निरोगी काया

पथ्य सेवन से मधुमेह का उपचार

बटुकेश्वर दत्त सिंह 'बटुक'

ऐश्वर्य, मोटापा और मधुमेह सदा-सर्वदा से एक-दूसरे के साथी रहे हैं। संसार के अति प्राचीन रोगों में से मधुमेह एक है। यह शरीर में एक ऐसी विशिष्ट स्थिति है, जिसमें रक्त की शर्करा का स्तर बहुत अधिक हो जाता है। और वह पेशाब के साथ बाहर निकलती है। ऐसी दशा तब होती है, जब शरीर में इन्सुलिन बहुत ही कम अथवा अपेक्षाकृत कम होने के कारण दैनिक भोजन के चयापचय में शरीर असमर्थ हो जाता है। यह इन्सुलिन अग्न्याशय ग्रंथि से निकलता है, जो आमाशय के पीछे उदर के मध्य होती है। भोजन से प्राप्त कार्बोज, प्रोटीन और वसा के चयापचय में अवरोध के कारण मधुमेह के लक्षण और उनसे आगे की अन्य जटिलताएं उत्पन्न होती हैं।

मधुमेह रोग के सामान्य लक्षण होते हैं—अत्यधिक प्यास लगना, बहुमूत्र की शिकायत, अधिक भूख लगना पर शरीर भार में कमी आना, थोड़ा काम करने पर भी विशेष थकावट, सम्पूर्ण शरीर में बराबर खुजली मचना विशेषकर जननेन्द्रियों में, नेत्रों की ज्योति में गिरावट, शरीर में पीड़ा, आलस्य, फोड़े और अन्य संक्रमण आदि। उपर्युक्त में से दो तीन लक्षण प्रकट होते ही विशेषज्ञों से पेशाब तथा रक्त की जांच कराएं और रोग की अन्य जटिलताओं के पहले उस पर नियंत्रण पा लें।

यह रोग संक्रामक तो नहीं होता परन्तु वंशानुगत अवश्य होता है। मधुमेह से पीड़ित माता-पिता की संतानों में आहार के चयापचय की खराबियां होने की अधिक आशंका रहती है। बहुत अधिक भोजन करने वाले मोटे लोगों को यह रोग अधिक होता है। आराम से बैठकर कार्य करने वाले लोगों को मोटापे के साथ मधुमेह रोग भी आ घेरता है।

प्रायः 35 से 40 वर्ष की आयु के उपरांत उक्त प्रकार के व्यक्तियों में यह रोग प्रारम्भ होता है। वैसे 35 वर्ष से पूर्व भी यह रोग किसी को हो सकता है। बढ़ती उम्र में होने वाले मधुमेह रोग का इलाज विशेषज्ञों द्वारा इन्सुलिन से किया जाता है। प्रौढ़ व्यक्तियों अर्थात् 35 से 40 वर्ष की अवस्था अथवा उसके बाद होने वाले मधुमेह के रोगियों में उपयुक्त आहार एवं व्यायाम द्वारा पर्याप्त लाभ होता है। यह रोग अन्य अनेक शारीरिक भावनात्मक, आनुवंशिक आदि कारणों से भी हो सकता है परन्तु आहार दोषों से इसकी जटिलताएं बढ़ती हैं।

मोटे लोग व्यायाम करके तथा दैनिक आहार में आवश्यक परिवर्तन लाकर मधुमेह रोग पर पर्याप्त नियंत्रण पा सकते हैं। रोगी को स्वास्थ्य लाभ हो, इसके लिए उसे अपने जीवन के प्रति आशावान अवश्य होना चाहिए। नियमित व्यायाम, वन-उपवनों में घूमना, नित्य प्रातः दूर तक टहलने जाना, खुली स्वच्छ हवा में कुछ न कुछ शारीरिक श्रम अवश्य करना रोग में परम लाभकारी होता है। ऐसा करने से शरीर के क्लोम पर प्रभाव पड़ता है और क्लोम की प्रक्रिया ठीक होने पर रोग स्वयं ही ठीक होने लगता है।

आज संसार में लाखों मधुमेह पीड़ित लोग नियमित व्यायाम करके तथा उपयुक्त आहार लेकर सामान्य जीवन बिता रहे हैं। परन्तु आवश्यक है कि मनुष्य सभी प्रकार का भय एवं भ्रम त्याग कर निश्चिन्त रहे। सामान्य जीवन यापन के लिए आवश्यक है कि मनुष्य समुचित आहार ले, जिससे उसके शरीर को काम करने के लिए ऊर्जा मिल सके, उसके शरीर की क्षतिपूर्ति के लिए कोषिकाओं का निर्माण हो तथा बाहरी व्याधियों से उसकी सुरक्षा रहे। इसे दृष्टिगत रखते हुए भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् के राष्ट्रीय पोषण संस्थान की सिफारिश के अनुसार यदि एक साधारण काम करने वाला प्रौढ़ व्यक्ति मधुमेह पर नियंत्रण पाने के लिए अपने सामान्य दैनिक आहार में उपयुक्त परिवर्तन करे तो विशेष उपयोगी रहता है।

यह ध्यान रहे कि आलू, शकरकंद, गाजर जैसी सब्जियों को भोजन में न लिया जाए। चावल, चिकनाई, चीनी, चाय या काफी की मात्रा पर्याप्त घटाएं मिठाई, खीर, चाकलेट, जैम, जेली, केक, पेस्ट्री आदि बहुत कम खाएं।

तले हुए पकवानों में कमी करें।

सूखे फल-मेवे न लें।

शक्कर व गुड़ त्याग दें।

यदि हो सके तो भूख से एक रोटी कम खाएं।

शराब का पूर्ण निषेध रहे।

ताजे फल, हरी पत्तियों वाली सब्जियों, कच्ची सब्जियों की सलाद, नींबू, टमाटर, करेला, अंजीर आदि का अधिक सेवन करें।

दूध और दही का पर्याप्त प्रयोग करें विशेष कर गाय का दूध और दही।

उपयुक्त आहार उचित मात्रा में एवं अनुपात में लेने से ही वांछित लाभ देता है। मधुमेह से पीड़ित व्यक्ति निश्चित ही अपने भोजन में आवश्यक परिवर्तन करके सामान्य लोगों की भांति जीवन यापन कर सकता है। □